पूर्वाञ्चल खेती

वर्ष : 32 | अप्रैल 2022 | अंक : 04

प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वाञ्चल खेती

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वाञ्चल खेती

वर्ष 32 | अप्रैल 2022 | अंक 04

संरक्षक

डॉ. बिजेन्द्र सिंह

कुलपति

प्रधान सम्पादक

प्रो. ए. पी. राव

निदेशक प्रसार

तकनीकी सम्पादक

डॉ. आर. आर. सिंह

प्राध्यापक, मृदा विज्ञान

मो. नं. 9450938866

सम्पादक मण्डल

डॉ. वी. पी. चौधरी

सहायक प्राध्यापक, पादप रोग

डॉ. पंकज कुमार

सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान

डॉ. अनिल कुमार

सहायक प्राध्यापक, प्रक्षेत्र प्रबन्ध

सम्पादक

उमेश पाठक

मोबाइल नं. 9415720306

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखक के निजी हैं। प्रकाशक/सम्पादक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है

विषय सूची

पुदीना (मेंथा) की खेती से अधिक लाभ कमायें — 01
उमेश बाबू एवं रामजीत

खीरा की वैज्ञानिक खेती — 03
राम प्रकाश एवं भूप नारायन सिंह

हल्दी की वैज्ञानिक खेती — 05
अंशुमान सिंह एवं भानू प्रताप

पालक की वैज्ञानिक खेती — 07
अंकिता गौतम एवं अखिल कुमार चौधरी

हरी खाद एक वरदान — 10
विशाल सिंह, कुलदीप सिंह एवं अंकिता राव

फलदार फसलों के लिए घातक है जलवायु परिवर्तन — 12
वर्तिका सिंह एवं भगवान दीन

प्याज में एकीकृत नाशीजीव प्रबंधन — 14
राहुल सिंह राघुवंशी एवं हेमंत कुमार सिंह

आधुनिक खेती प्रणाली में ड्रोन का उपयोग एवं महत्व — 16
संदीप कुमार पाण्डेय एवं प्रमोद कुमार मिश्रा

भारतीय भोजन में कम हो रही है जिंक की मात्रा, बढ़ा बीमारियों का खतरा — 18
कंचन एवं एस. के तोमर

गर्भावस्था में समस्यायें आयें तो महिलायें क्या करें — 20
सरिता श्रीवास्तव, सुमन प्रसाद मौर्या एवं प्राची शुक्ला

मछली पालन प्रबंधन — 22
सी. पी. सिंह' एवं ओ पी वर्मा

बैकयार्ड मुर्गी पालन ग्रामीण अर्थव्यवस्था सुदृढ़ करनें में सहायक — 26
विद्या सागर एवं राम जीत

अप्रैल माह में किसान भाई क्या करें — 30

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के — 31

बॉक्स सूचनाएं

पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये, आगे बढ़िये — 11
कृषि लागत कम करने हेतु सुझाव — 15
अमूल्य सुझाव — 25

प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

विश्वविद्यालय के कार्य क्षेत्र में स्थापित विभिन्न कृषि विज्ञान/ज्ञान केन्द्र एवं अनुसंधान केन्द्र

क्र. सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष/ प्रभारी अधिकारी	दूरभाष कार्यालय	मोबाइल
1.	वाराणसी	डॉ. नरेन्द्र रघुवंशी	05542–248019	9415687643
2.	बस्ती	डॉ. एस. एन. सिंह	05498–258201	9450547719
3	बलिया	श्रीमती प्रेमलता श्रीवास्तव	–	9918175154
4.	फैजाबाद	डॉ. शशिकान्त यादव	05278–254522	9415188020
5.	मऊ	डॉ. एल. सी. वर्मा	0547–2536240	7376163318
6.	चंदौली	डॉ. एस. पी. सिंह	0541–2260595	9458362153
7.	बहराइच	डॉ. विनायक शाही	05252–236650	8755011086
8.	गोरखपुर	डॉ. सतीश कुमार तोमर	–	9415155518
9.	आज़मगढ़	डॉ. डी.के. सिंह	–	9456137020
10.	बाराबंकी	डॉ. शैलेश कुमार सिंह	–	9455501727
11.	महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	–	7839325836
12.	जौनपुर	डॉ. सुरेश कुमार कनौजिया	–	9984369526
13.	सिद्धार्थनगर	डॉ. ओम प्रकाश	05541–241047	9452489954
14.	सोनभद्र	डॉ. पी. के. सिंह	–	9415450175
15.	बलरामपुर	डॉ. एस. के. वर्मा	–	9450885913
16.	अम्बेडकरनगर	डॉ. रामजीत	–	9918622745
17.	संतकबीरनगर	डॉ. अरविन्द सिंह	–	9415039117
18.	अमेठी	डॉ. रतन कुमार आनन्द	–	9838952621
19.	बहराइच (नानपारा)	डॉ. के. एम. सिंह	–	9307015439
20.	मनकापुर–गोण्डा	डॉ. मिथिलेश पाण्डे	–	9415665138
21.	बरासिन–सुल्तानपुर	डॉ. वी.पी. सिंह	–	9839420165
22.	अमिहित–जौनपुर	डॉ. संजीत कुमार	–	9837839411
23.	गाजीपुर	डॉ. आर. सी. वर्मा	–	9411320383
24.	श्रावस्ती	डॉ. आर.पी.एस. रघुवंशी	–	9415533739
25.	आजमगढ़ द्वितीय	डॉ. डी.के. सिंह	–	9456137020

विश्वविद्यालय के कृषि ज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	अमेठी	डॉ. ए. पी. राव.	9415720376	–
2.	गोण्डा	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–
3.	देवरिया	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–
4.	गाजीपुर	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–

विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि अनुसंधान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	मसौधा, फैजाबाद	डॉ. डी. के. द्विवेदी	7706884188	05278–254153
2.	तिसुही, मिर्जापुर	डॉ. पी. के. सिंह	9415450175	05442–284263
3.	बसुली, महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	9451430507	–
4.	घाघरा घाट, बहराइच	डॉ. नितेन्द्र प्रकाश	9026289336	0525–235205
5.	बड़ा बाग, गाजीपुर	डॉ. सी. पी. सिंह	9628631637	–
6.	बहराइच	डॉ. एस. के. सिंह	8787289358	0548–223690

प्रो. ए. पी. राव
निदेशक प्रसार

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या-224 229 (उ.प्र.), भारत
टेलीफैक्स : 05270-262821
फैक्स : 05270-262821

सम्पादकीय

हमारे किसान भाईयों की कृषि आधारित आय दोगुनी हो इसके लिए देश व प्रदेश की सरकार प्रतिबद्ध है। हमारे किसान भाईयों को इसके लिए आवश्यक सुविधायें सरकारी तंत्र द्वारा उपलब्ध कराने के प्रयास निरन्तर जारी हैं। इसी क्रम में विश्वविद्यालय किसान भाईयों तक बेहतर व अत्याधुनिक कृषि तकनीकें पहुंचाने के लिए लगातार प्रयासरत है। इन्हीं उद्देश्यों को ध्यान में रखकर रबी और और खरीफ फसलों के मिलने वाले समयाविधि में नकदी फसलों के खेती की तकनीक से लेकर सघन कृषि की उन्नतशील विधाओं की जानकारी से भरपूर लेख पत्रिका के इस अंक में प्रकाशित किये जा रहे हैं।

आशा है कि पत्रिका की पाठ्य सामग्री का लाभ हमारे किसान भाई अपनी कृषि आधारित आय में बढ़ोत्तरी के लिए कर सकेंगे।

(ए.पी. राव)

पुदीना (मेंथा) की खेती से अधिक लाभ कमायें

डॉ. उमेश बाबू* एवं डॉ. रामजीत**

वर्तमान वैश्वीकरण के दौर में जहां एक ओर वैश्विक कृषि व्यवसायीकरण की ओर गतिशील दिखाई देती है। वहीं दूसरी ओर भारतीय कृषि आज भी परंपरागत खेती को अपने युवा कांधों व तकनीकी दिमाग पर बोझ बनाये बैठी है। वर्तमान समय परंपरागत खेती से हटकर बाजार मांग के अनुसार फसल उत्पादन का है जहां नये कृषि उत्पादों का उत्पादन कर किसान अपने आय को उच्चतम स्तर तक पहुंचा सके।

पुदीना लेमिएसी कुल से संबंधित एक बारह मासी खुशबुदार अतः भुस्वारी प्रकार का पौधा है। पुदीने की खेती मुख्यतः उनकी हरी, ताजा खुशबूदार पत्तियों के लिये की जाती है। गांव–घरों में पनियारी के पास जहां पानी नियमित रूप से लगता है पुदीना लगाया जा सकता है। शहरों में लोग अपनी छतों पर पुदीनें को गमलों में लगाकर रखते हैं तो कहीं महानगरों में कई लोग अपनी खिड़कियों तथा रोशनदानों में पुदीना लगे गमले रखते है जिससे उनको पुदीनें की हरी ताजी पत्तियां भी मिल जातीहै। तथा घरों में हवा के साथ पुदीने की भीनी–भीनी खुशबू भी फैल जाती है।

पुदीने की खेती को लेकर पिछले कई वर्षों से किसान उत्सुक दिखाई देते है, ओर हो भी क्यों नहीं, पुदीना है ही कुछ ऐसा कि इसका नाम सुनकर ही हम सबके मुंह में पानी भर आता है। पुदीने का आम तौर पर हम चटनी बनाने के लिये उपयोग करते है, पर इसके साथ–साथ पुदीने के अन्य औषधीय उपयोग भी है। पुदीने से निकाले जाने वाले सुगंधित तेल व अन्य घटकों का उपयोग सौन्दर्य प्रसाधनों, विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों को सुगंधित करने, टॉफी तथा च्वींगम बनाने, पान के मसालों को सुगंधित बनाने, खांसी–जुकाम सर दर्द की औषधियां बनाने, उच्चस्तर की शराब को सुगंधित बनाने तथा ग्रीष्मकाल के दौरान लू से बचने के पेय पदार्थ बनाने में पुदीना बहुत उपयोगी होता है। आज भारत वर्ष पुदीना उत्पादन के क्षेत्र में सबसे आगे है। भारत वर्ष में पुदीना के निर्यात के फल स्वरूप लगभग 800 करोड़ रूपये की विदेशी मुद्रा हर वर्ष आती है क्योंकि अंतर्राष्ट्रीय बाजार में पुदीने के तेल तथा अन्य घटकों की भारी मांग है।

उक्त व्यक्तव्यो को ध्यान में रखते हुये तथा इसकी महत्ता को समझ कर पुदीना उत्पादन की उन्नत तकनीक को इस लेख के माध्यम से किसान भाईयों तक विस्तारित करने का प्रयास किया जा रहा है जिसकी मदद से वे पुदीने की वैज्ञानिक खेती आसानी से कर सके।

जलवायु

पुदीने की खेती कई तरह के जलवायु में की जा सकती है। यह शीतोष्ण एवं समशीतोष्ण जलवायु में आसानी से लगाया जा सकता है। इसे सिंचित तथा असिंचित दोनों दशाओं में लगाया जा सकता है परंतु सिंचित अवस्था में इसकी उपज असिंचित की अपेक्षा ज्यादा प्राप्त होती है।

भूमि मिट्टी

सिंचित फसल के रूप में पुदीना लगभग सभी प्रकार की मृदाओं में उगाया जा सकता है, बशर्तें उसमें जैविक खाद का उपयोग उपयुक्त मात्रा में किया गया हो उचित जल निकास वाली रेतीली दोमट मिट्टी पुदीना की खेती के लिये सर्वोत्तम मानी जाती है। जिन खेतों में मिट्टी की पी.एच. 6–7 तक हो वे खेत पुदीना की खेती के लिए उपयुक्त माने जाते है।

पुदीने के प्रकार

आज कल पुदीने की प्रमुखतः दो प्रजातियां प्रचलन में है

1.मेन्था पिपरीटा (विलायती पुदीना)

2.मेन्था आर्वेन्सिस (जापानी पुदीना)

भारत में सामान्यतः उगायी जाने वाली प्रजाति ''जापानी पुदीना'' है। यह मुख्यतः उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश तथा राजस्थान में उगायी जाती है।

*वैज्ञानिक, आनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन कृषि विज्ञान केन्द्र, श्रावस्ती, **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष कृषि विज्ञान केन्द्र, अम्बेडकर नगर

उन्नत किस्में

एम.ए.एस.1, कोसी, कुशाल, सक्ष्म, गोमती (एच.वाई. 77), शिवालिक, हिमालय, एल–11813, संकर 77, ई. सी.41911 आदि मुख्यतया उगायी जाने वाली पुदीने की उन्नत किस्में है।

खाद एवं उर्वरक

प्रति हैक्टेयर पुदीने की खेती के लिए 200–500 क्विंटल गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद तथा 120–135 : 50–60 : 50–60 किलोग्राम एन.पी.के. का उपयोग करना चाहिए।

पौध रोपण / बुवाई

पुदीने की फसल के लिये अंतः भुस्तारी (सकर अथवा स्टोलॉन) का उपयोग किया जाता है। एक हैक्टेयर क्षेत्र के लिये लगभग 200–250 किलोग्राम जड़ों की आवश्यकता होती है। पुदीने की रोपाई का उपयुक्त समय जनवरी–फरवरी माना जाता है परंतु अप्रेल मई में भी इसकी रोपाई की जा सकती है। अगर रोपाई फरवरी के महीने में की जाये तो मात्र 2–3 सप्ताहों में इनकी जडें फूट आती हैं और आसानी से जल्दी ही पूरा पौधा फैल जाता हैं। पुदीना लगाने के लिए इसकी मिट्टी के अंदर की भुस्तारिकाओं को 10–15 से.मी. शाखाओं को जमीन में दबा दिया जाता है। रोपण के दौरान यह अवश्य ध्यान रखें कि भुस्तारिकायें जमीन में 5 से.मी. से अधिक गहरी ना चली जाये।

सिंचाई एवं जल निकास

शुष्क क्षेत्रों में उगाये जाने वाले पुदीना की समय–समय पर तथा उचित मात्रा में सिंचाई की जानी चाहिए क्योंकि पत्तियों की उपज तथा तेल की गुणवत्ता के लिये सिंचाई का बहुत महत्व है। रोपाई के बाद हर 10–12 दिनों के अंतराल के बाद सिंचाई करनी चाहिए। बरसात के दिनों में इसके लिये खेतों में जल निकास की अच्छी व्यवस्था होनी चाहिए अन्यथा पौधा अधिक पानी की मात्रा के कारण नष्ट हो जाता है।

खरपतवार नियंत्रण

पुदीने की फसल में खरपतवार के नियंत्रण के लिये कुल तीन बार निराई की जानी चाहिए। प्रथम निराई रोपण के करीब एक माह बाद द्वितीय करीब दो माह बाद तथा तृतीय कटाई के करीब 15 दिनां बाद की जानी चाहिये। खरपतवार नियंत्रण के लिये खरपतवार नाशी रसायन जैसे की पेन्डीमिथेलॉन (स्टाम्प) (1 किलोग्राम 100 लीटरपानी के साथ घोल बनाकर) का उपयोग भी किया जा सकता है।

कीट एवं रोग प्रबंधन

रोयेदार सुण्डी तथा पत्ती लपेटक कीट के प्रकोप की रोकथाम के लिये 300–400 मिली. क्यूनालफॉस प्रति हैक्टेयर 625 लीटर पानी की दर से छिडकाव करे।मैलाथियॉन 50 ई.सी. 7 मिली प्रति लीटर पानी की दर से छिडकाव भी इस कीट के नियत्रंण के लिये उपयुक्त है।

लालडी (कद्दू का लाल भृंग) की रोकथाम के लिये मैलाथियॉन 50 ई.सी. 1 मिली प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।

कटुआ कीट (कटवर्म) तथा दीमक की रोकथाम के लिये अंतिम जुताई के समय फॉरेट दाने दार 10 जी रसायन 20 किग्राप्रति हैक्टे0 की दरसे खेत की मिट्टी में मिलायें।

भुस्तारी सडन तथा जड गलन रोगों की रोकथाम के लिये रोपण के समय भुस्तारिकाओं को केप्टान (25 प्रतिशत) अथवा बेनलेट (0.1 प्रतिशत) से उपचारित करना चाहिए।

रतुआ तथा पत्ती धब्बा रोगों की रोकथाम के लिये ब्लीटॉक्स (3 प्रतिशत) अथवा डाइथेन एम–45 (0.2 प्रतिशत) का छिडकाव करें।

चूर्णिल आसिता रोग के प्रबंधन के लिये घुलनशील गंधक अथवा कैराथन (25 प्रतिशत) का उपयोग करें।

तुडाई / कटाई एवं उपज

पुदीनें की प्रथम कटाई रोपण के करीब 100–120 दिनों बाद (जून के महीने में) की जाती है। दूसरी कटाई पहली कटाई के 70–80 दिनों बाद (अक्टूबर के महीने में) की जानी चाहिए। अगर इसकी कटाई सही समय पर ना की जाये तो इसकी उपज तथा तेल की गुणवत्ताा पर विपरीत प्रभाव पडता है। एक साल में दो बार कटाई के फलस्वरूप एक हैक्टेयर से करीब 20–25 टन पुदीनें की पत्तियों की उपज होती है, जिनसे प्रति वर्ष करीब 250 कि.ग्रा. तेल प्राप्त होता है।

खीरा की वैज्ञानिक खेती

राम प्रकाश* एवं भूप नारायन सिंह**

खीरा उष्ण मौसम में होने वाली फसल है, फलों की उचित बढ़वार के लिए 15–20 डिग्री सेंटीग्रेट का तापक्रम उचित होता है, खीरे की खेती के लिए मिट्टी का पीएच मान 6–7 के बीच होना चाहिए। वृध्दि अवस्था के समय पाला पड़ने से इसको अत्यधिक नुकसान होता है, विदेशों मे उपलब्ध किस्मों को सर्दी के मौसम मे भी ग्रीनहाउस या पोलीहाउस मे सफलता पूर्वक उगाया जा रहा है, ग्रीनहाउस या पॉलीहाउस में एक वर्ष मे खीरे की तीन फसले पैदा की जा सकती है। शहर के नजदीक इसकी खेती अत्यधिक लाभ का सौदा है, सामान्य खीरे के बजाए बीज रहित खीरे की बाजार में अधिक मांग रहती है।

खीरे की खेती के लिए मिट्टी का चुनाव

खीरे की खेती लगभग सभी मिट्टी पर की जा सकती है, लेकिन बलुई दोमट पर खेती सरलता और उत्पादन में बढ़ोतरी देखी गई है, मिट्टी में जैविक तत्वों की उच्च मात्रा वाली मिट्टी में तथा उच्च तापमान में अच्छी खेती होती है। मिट्टी का पीएच मान 6–7 और पानी का अच्छा निकास होना, फसल को उचित पैदावार देता है।

उन्नत किस्में

भारतीय किस्में–स्वर्ण अगेती, स्वर्ण पूर्णिमा, पूसा उदय, पूना खीरा, पंजाब सलेक्शन, पूसा संयोग, पूसा बरखा, खीरा 90, कल्यानपुर हरा खीरा, कल्यानपुर मध्यम और खीरा 75 आदि प्रमुख है।

नवीनतम किस्में–पीसीयूएच– 1, पूसा उदय, स्वर्ण पूर्णा और स्वर्ण शीतल आदि प्रमुख है।

संकर किस्में– पंत संकर खीरा– 1, प्रिया, हाइब्रिड– 1 और हाइब्रिड– 2 आदि प्रमुख है।

विदेशी किस्में– जापानी लौंग ग्रीन, चयन, स्ट्रेट– 8 और पोइनसेट आदि प्रमुख है।

खाद एवं उर्वरक

खीरा की खेती के लिए 80 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 60 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर देना चाहिए । फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी तथा नत्रजन की आधी मात्रा बुआई के समय मेड़ पर देना चाहिए । शेष नत्रजन की मात्रा दो बराबर भागों में बाँटकर बुआई के 20 एवं 40 दिनों बाद गुड़ाई के साथ देकर मिट्टी चढ़ा देना चाहिए ।

सिंचाई व्यवस्था

जायद सीज़न में खीरे की फसल के लिए खेत में नमी होना बहुत जरुरी होता है। ग्रीष्मकालीन फसल में 4–5 दिनों के अंतर पर सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। वर्षाकालीन फसल में अगर वर्षा न हो, तो सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है।

समय पर सिंचाई व जल निकास प्रबंधन

मौसम व मिट्टी की क़िस्म के अनुसार सिंचाई करना बेहतर रहता है। आमतौर पर शुष्क मौसम में सिंचाई अधिक करनी पड़ती है तो वहीं पर नम मौसम में पौधों में जल माँग कम होती है। खेती किसानी डॉट ओर्ग फ़सल जल माँग के अनुरूप सिंचाई करने की सिफ़ारिश करता है । बीज की बुवाई के 1–2 दिन के बाद हल्की सिंचाई करना अच्छा रहता है। अंकुरण शीघ्र होता है। इसके बाद 4 से 5 दिन बाद फिर एक सिंचाई कर दें।

टपक विधि से करें सिंचाई

अगर खुले खेत में खीरे की खेती कर रहे हैं, तो किसानों को इसकी सिंचाई टपक विधि से करनी चाहिए. इस विधि में घुलनशील खाद का उपयोग कर सकते हैं, इससे सभी खीरे की बेलों को उचित खुराक मिल जाती है, साथ ही ज़मीन की गुणवत्ता भी बढ़ जाती है, इसलिए टपक विधि को उपयुक्त माना जाता

*शोध छात्र, **सहायक प्राध्यापक, शस्य विज्ञान, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उत्तर प्रदेश)

है. ध्यान दें कि फसल में खुले पानी के उपयोग से बेल खराब हो सकती हैं। इसके अलावा पानी की लागत के साथ कीटों का खतरा भी बना रहता है, इसलिए इस समस्या से बचने का उचित प्रबंध कर लेना चाहिए।

निराई गुड़ाई व खरपतवार नियंत्रण

खीरे की फ़सल में खरपतवार निराई गुड़ाई कर निकाल देना चाहिए। साथ की पौधों की जड़ों में मिट्टी चढ़ा दें ताकि भूमि के बाहर ना खुली रहे। निराई गुड़ाई करने से लताएँ अच्छी बढ़ती है और फलन अधिक होती है।

पौध संरक्षण

ग्रीन हाउस और पॉली हाउस में कीट व रोगों का प्रभाव कम देखने को मिलता है किन्तु खुले में बीज रहित किस्मों में कुछ कीट व रोगों का प्रकोप होंने की संभावनाए रहती है, प्रमुख कीट व रोग इस प्रकार है

एन्थ्राक्नोस या फल गलन

इस बीमारी से पौधों के पत्तियों, तने एवं फलों पर लक्षण दिखाई देते हैं, इस रोग से पत्तों पर पीले रंग के धब्बे और फलों के ऊपर अण्डाकार धब्बे निर्मित होते हैं। अत्यधिक नमी के कारण इन धब्बों का निर्माण होता है और इन धब्बों से गुलाबी चिपचिपा पदार्थ निकलता है। इस रोग की रोकथाम के लिए मैनकोज़ेब 75% WP @ 500 ग्राम/एकड़ या क्लोरोथालोनिल 75% WP @ 300 ग्राम/एकड़ या हेक्साकोनाज़ोल 5% SC @ 300 ग्राम/एकड़ की दर से 200 लीटर पानी में मिलकर छिड़काव कर दे, या स्यूडोमोनास फ्लोरोसेंस 250 ग्राम/एकड़ या ट्राइकोडर्मा विरिडी 500 ग्राम/एकड़ के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

चूर्णिल आसिता/भभूतिया रोग

इसे पाउडरी मिल्ड्यू रोग भी कहा जाता है। सबसे पहले पत्तियों के ऊपरी भाग पर सफ़ेद–धूसर धब्बे दिखाई देते है जो बाद में बढ़कर सफ़ेद रंग के पाउडर में बदल जाते हैं, संक्रमित भाग सूख जाता है और पत्तियां गिर जाती है, हेक्ज़ाकोनाजोल 5% SC 400 मिली या थियोफेनेट मिथाइल 70 डब्लू पी या एज़ोक्सिस्ट्रोबिन 23 एस सी का 200 मिली प्रति एकड़ 200 से 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

फल मक्खी

यह खीरे की फसल में पाये जाने वाला गंभीर कीट हैं। मादा मक्खियां फल के नीचे की ओर अंडे देती हैं, इस अंडों से लट्टे निकालकर फल को छेद देती है और फल के गूदे को खाती रहती हैं, जिस कारण फल गलना शुरू हो जाता है। रोकथाम के लिए सायपरमेथ्रिन 25% EC @100 मिली/एकड़ या लैम्ब्डा साइहेलोथ्रिन 4.9% CS @ 200 मिली/एकड़ की दर से 200 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

सफेद मक्खी (व्हाइट फ्लाई)

इस कीट के शिशुओं व वयस्कों के रस चूसने से पत्ते पीले पड़ जाते हैं। इनके मधुबिन्दु पर काली फंफूद आने से पौधों की भोजन बनाने की क्षमता कम हो जाती है। इस कीट की रोकथाम के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 1 मि.ली./3 लीटर या डाइमेथोएट 30 ईसी. 2 मि.ली./लीटर का छिड़काव करें। इल्लियों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें। नीम बीज अर्क (5 प्रतिशत) या बी.टी. 1 ग्राम/लीटर या कार्बेरिल 50 डब्ल्यू.पी. 2 मि.ली./लीटर या स्पिनोसेड 45 एस.सी. 1 मि.ली./4 लीटर का छिड़काव करें।

खीरे की फलों की तुड़ाई व उपज

खीरा की बुवाई के 50–60 दिन बाद फलों की तुड़ाई की जाती है। फल कोमल व मुलायम होना चाहिए। बहुत अधिक वृद्धि वाले फलों को बाज़ार मूल्य अधिक नही मिलता। तुड़ाई 2 से 4 दिन के अंतर पर करते रहना चाहिए। पूरे फ़सल में 10 से 15 बार आप तुड़ाई कर सकते हैं। किसी भी फ़सल की पैदावार भूमि की उर्वरा शक्ति, फ़सल की क़िस्म, फ़सल की देखभाल, पर निर्भर करती है। अगर खीरे की फ़सल की अच्छी देखभाल की जाए तो सामान्यतः 150 से 250 कुन्तल प्रति हेक्टेयर उपज ली जा सकती है।

हल्दी की वैज्ञानिक खेती

अंशुमान सिंह* एवं डॉ. भानू प्रताप**

हल्दी का वैज्ञानिक नाम कुरकुमा लोंगा है, इसे संस्कृत में हरिद्रा कहते हैं तथा अंग्रेजी में यह टरमेरिक के नाम से जानी जाती है। हल्दी सभी की चहेती मसाला फसल है, जिसे मनुष्य के जीवन में जन्म से मृत्यु तक अनेक अवसरों पर प्रयुक्त किया जाता है। इन परम्पराओं की उपयोगिता जो भी हो, हमारे पूर्वजों ने हल्दी को शुभ तथा मंगलदायक वस्तु माना है। संक्षेप में यह भी कहा जा सकता है कि हल्दी केवल एक मसाला मात्र ही नहीं बल्कि यह एक बहुमूल्य जड़ी–बूटी है, जो मनुष्य को स्वस्थ शरीर, खूबसूरती तथा लम्बी उम्र प्रदान करती है। हल्दी की अच्छी फसल के लिए उत्तम किस्म का चुनाव, बीजाई का समय, बोने का तरीका, बीज की मात्रा, बीजोपचार की विधि, लगाने का अंतर, उर्वरक देने की विधि, समय एवं मात्रा के साथ–साथ फसल की देख–रेख एवं फसल सुरक्षा हेतु मुख्य बिन्दुओं की जानकारी उत्पादकों को होना अत्यन्त आवश्यक है, जो निम्नानुसार है।

जलवायु व मिटटी

हल्दी मुख्यतः उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में उगाई जाती है, इसकी खेती के लिए गर्म तथा आर्द्रता वाला मौसम ज्यादा उपयुक्त रहता है। हल्दी को भिन्न–भिन्न प्रकार की मिट्टियों में उगाया जाता है। इसकी खेती के लिए रेतीली अथवा बलुई दोमट और मटियार दोमट मिट्टी सबसे अधिक उपयुक्त रहती है। यह उपजाउऊ और अच्छे जल निकास वाली होनी चाहिए। हल्दी की खेती हल्की मिट्टी में अच्छी होती है। चिकनी व भारी मिट्टी में कन्दों का विकास अच्छा नहीं होता। खेत की तैयारी के समय एक बार मिट्टी पलटने वाले हल से और 3–4 बार देशी हल से या हैरो से जुताई करें। यदि ढेले दिखाई दें तो 2–3 बार पाटा चलाकर मिट्टी को भुरभुरी बना लें।

हल्दी की किस्में

गांठां के रंग और आकार के अनुसार हल्दी की कई किस्में पाई जाती है। मालाबार की हल्दी औषधीय महत्व की होती है तथा यह जुकाम और कफ के उपचार के लिए उपयुक्त है। पूना एवं बंगलौर की हल्दी रंग के लिए अच्छी है। जंगली हल्दी अपनी सुगंधित गांठों के कारण भिन्न है तथा इसे 'कुरकुमा एरोमेटिका' (सुगंधित हल्दी) कहते हैं। हिमाचल प्रदेश में आमतौर पर स्थानीय किस्में ही प्रचलन में है। हल्दी की कुछ उत्कृष्ट किस्मों का विवरण निम्नानुसार हैः

पालम पिताम्बर

यह किस्म हरे पत्तों के साथ मध्यम ऊँचाई वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। यह अधिक आय देती है और औसतन वार्षिक उपज 332 क्विंटल प्रति हैक्टेयर (25–26 क्विंटल प्रति बीघा) तक प्राप्त हो सकती है। इस किस्म में स्थानीय किस्मों से अधिक उपज देने की क्षमता है और इसकी गठ्ठिया उंगलियों की तरह लम्बी व रंग गहरा पीला होता है।

पालम लालिमा

इसकी गांठों का रंग नारंगी होता है और स्थानीय किस्मों की अपेक्षा इसकी औसत वार्षिक उपज अधिक होती है। इस किस्म की औसतन वार्षिक उपज 250–300 क्विंटल प्रति हैक्टेयर (20–24 किवंटल प्रति बीघा) तक ली जा सकती है।

कोयम्बटूर

यह बारानी क्षेत्रों में उगाने के लिए उपयुक्त किस्म है। इसके कंद बड़े, चमकीले एवं नारंगी रंग के होते हैं। यह 285 दिन में खुदाई के लिए तैयार हो जाती है।

कृष्णा

यह लम्बे प्रकंदों तथा अधिक उपज देने वाली किस्म है। यह कंद गलन के प्रति रोगरोधी है और 255 दिन में पककर तैयार हो जाती है।

बी.एस.आर.–1

जिन क्षेत्रों में पानी खड़ा रहता हो वहाँ के लिए अधिक

*शोध छात्र उद्यान विज्ञान विभाग, **सह–प्राध्यापक, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या, उत्तरप्रदेश

उपज देने वाली उपयुक्त किस्म है। इसके कंद लम्बे तथा चमकीले पीले रंग के होते हैं। यह किस्म 285 दिनों में तैयार हो जाती है।

स्वर्णा

यह अधिक उपज देने वाली, गहरे नारंगी रंग कंद युक्त अधिक उपज देने वाली किस्म है।

सुगुना

छोटे कंद और 190 दिनों में तैयार होने वाली यह किस्म कंद गलन रोग के लिए प्रतिरोधी है।

सुदर्शन

इसके कन्द घने, छोटे आकार के तथा देखने में काफी खूबसूरत होते हैं। यह किस्म 190 दिन में खुदाई के लिए तैयार हो जाती है।

बिजाई का समय एवं विधि

हल्दी की फसल की बिजाई वैसे तो अप्रैल से जुलाई तक की जा सकती है, परन्तु जहाँ पर सिंचाई के साधन हों वहाँ बिजाई अप्रैल–मई में ही कर देनी चाहिए। हल्दी को तीन प्रकार से लगाया जा सकता है। समतल भूमि में, मेढ़ों पर और ऊँची उठी हुई क्यारियों में। बलुई दोमट मिट्टी में हल्दी समतल भूमि में लगा सकते हैं, लेकिन मध्यम व भारी भूमि में बिजाई सदैव मेढ़ों पर एवं उठी हुई क्यारियों में ही करनी चाहिए। बिजाई सदैव पंक्तियों में करें, पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 से 40 सैंटीमीटर एवं पंक्तियों में कंद से कंद की दूरी 20 से 25 सैंटीमीटर रखनी चाहिए। बिजाई के लिए सदैव स्वस्थ एवं रोग रहित कंद छांटना चाहिए। कंद लगाते समय विशेष ध्यान रखने की बात है कि कंद की आँखें उपर की तरफ हों तथा कंद को 4–5 सेंटीमीटर की गहराई पर लगाकर मिट्टी से ढंक देना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

अन्य फसलों की तरह हल्दी की अधिक उपज पाने के लिए उर्वरक समुचित मात्रा में डालना आवश्यक है। खेत तैयार करते समय 15–20 क्विंटल प्रति बीघा अच्छी प्रकार से सड़ी–गली गोबर की खाद डालें। कच्ची गोबर की खाद खेत में न डालें क्योंकि इससे कटवर्म एवं दीमक का प्रकोप अधिक होता है और कंदों पर धब्बे पड़ जाते हैं। इसके अतिरिक्त बिजाई के समय 5 किलोग्राम कैन, 15 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट और 8 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति बीघा की दर से प्रयोग करें। कैन की शेष मात्रा को दो बार बिजाई के 40 दिन बाद (2.5 किलोग्राम) एवं 80 दिन बाद (2.5 किलोग्राम) खड़ी फसल में प्रयोग करें या 8 किलोग्राम 12:32:16 मिक्चर एवं 6 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति बीघा बिजाई के समय डालें व बिजाई के 40–50 दिन बाद यूरिया की 3 किलोग्राम मात्रा प्रति बीघा खड़ी फसल में दें।

निराई–गुड़ाई व मल्चिंग

खरपतवारों को नष्ट करने के लिए कम से कम दो–तीन निराई–गुड़ाई अवश्य करें। अगर बिजाई कतारों में या मेंढ़ों पर की गई है तो एक बार गुड़ाई देशी हल से की जा सकती है। बिजाई के तुरन्त बाद हरे पत्तों या घास की मल्चिंग कर दें ताकि मिटटी पर पत्तियों की 5 से 8 सेंटीमीटर मोटी तह बिछ जाए, इससे कन्दों का जमाव अच्छा होता है और मिट्टी में नमी रोकने की क्षमता बढ़ती है। यदि सम्भव हो तो बिजाई के 50 दिन बाद एवं 100 दिन बाद पुनः मल्चिंग करें।

सिंचाई

हल्दी की फसल लम्बे अंतराल (लगभग 9–10 माह) में तैयार होने वाली फसल है। अतः इसे समयानुसार समुचित सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। हल्दी की अगेती फसल लगाने हेतु बीजाई से पहले खेत की सिंचाई कर बरसात आते ही बिजाई करना उचित रहता है, क्योंकि हल्दी की बिजाई अप्रैल–मई माह में प्रारम्भ कर दी जाती है। अतः फसल में वर्षा के पूर्व आवश्यकतानुसार 6–7 दिनों के अन्तराल से सिंचाई करें। शीतऋतु में सिंचाई 10–12 दिन के अन्तराल पर करें। वर्षाऋतु की समाप्ति के बाद 15–20 दिन के अन्तर से फसल की सिंचाई करनी चाहिए।

फसल सुरक्षा प्रबन्ध

हल्दी की फसल में सामान्यतः कीड़े कम लगते हैं,

(शेष पृष्ठ 13 पर)

पालक की वैज्ञानिक खेती

अंकिता गौतम* एवं अखिल कुमार चौधरी**

व्यावसायिक रूप में पालक की खेती करने के लिये लगभग सभी किसान, पतझड़ या बसन्त के दौरान सीधे खेत में पालक के बीज (ज्यादातर संकर) बोते हैं। इसके बाद विशेष रूप से, प्रसंस्करण बाजार के लिए पालक उगाते समय, ज्यादातर व्यावसायिक किसान पौधों को कम कर देते हैं। वे कुछ पौधों को खेत से हटा देते हैं, ताकि कम पौधे बचे रहें और बेहतर वायु संचार हो सके। कटाई का समय इस बात पर निर्भर करता है कि हम पालक को ताजे बाजार के लिए उगा रहे हैं या प्रसंस्करण बाजार के लिए कई मामलों में, ताजा बाजार के लिए उगाये जाने वाले पालक के पौधों को बीज लगाने के लगभग 40–55 दिनों में ही एक बार काट दिया जाता है। इसके विपरीत, प्रसंस्करण बाजार के लिए उगाये जाने वाले पालक के पत्तों को बीजारोपण के लगभग 60–80 दिनों में काटा जाता है। कई मामलों में, पहली बार कटाई करने के बाद दोनों ताजा और संसाधित पौधों को दोबारा बढ़ने के लिए छोड़ दिया जाता है ताकि किसान दूसरी बार फसल की कटाई कर सकें।

पलक की मिट्टी सम्बन्धी आवश्यकताएं

पालक औसत मिट्टी में अच्छी तरह से उग सकता है, लेकिन जैविक पदार्थों से भरपूर मिट्टी में यह ज्यादा अच्छे से विकसित होगा। आमतौर पर, पालक उगाते समय मिट्टी का प्रकार और पी.एच. शायद ही कभी प्रतिबन्धी कारक बनते हैं। हालांकि 5–6 से 6–8 पी. एच. वाली रेतीली दोमट मिट्टी में पालक ज्यादा अच्छी तरह से विकसित होता है। फास्फोरस की गंभीर कमियों के मामले में किसान बीज बोने से कुछ दिन पहले प्रति हेक्टेयर की दर से डाल सकते हैं। इस बात का ध्यान रखें कि हर खेत और इसकी जरुरतें अलग होती हैं। बीज लगाने से पहले किसानों को मिट्टी का विश्लेषण कर लेना चाहिए। खेत तैयार करने के लिए तार्किक योजना बनाने के लिए किसी स्थानीय लाइसेन्स प्राप्त कृषि वैज्ञानिक से सलाह ले लेनी चाहिए। नाइट्रोजन का स्तर सुधारने के लिए बीज लगाने से पहले अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद भी डालते हैं और खेत की जुताई करते हैं।

पालक की पानी सम्बन्धी जरुरतें

पालक के पौधे की जड़े बहुत ज्यादा नीचे तक नहीं जाती हैं। इसीलिए, अच्छी उपज पाने के लिए इस पौधे को कम मात्रा में ज्यादा बार सिंचाई पसंद होती है। एक सामान्य नियम के अनुसार इसे उगाने की अवधि के दौरान किसानों को मिट्टी को नम रखने पर फोकस करना चाहिए। अनुभवी वैज्ञानिकों का दावा है कि मिट्‌टी को हमेशा नम रखने से पौधे को दो तरीके से मदद मिलती है। पहला, पौधा आवश्यक पानी सोखने में समर्थ होगा। दूसरा, इससे मिट्टी का तापमान कम रहेगा, और जिससे ज्यादा अच्छी पालक की उपज होगी। ज्यादा गर्म मौसम में पालक बीज देना शुरू कर देता है। ऐसी स्थिति में, पौधे आनुवंशिक रूप से अपने संसाधनों को पत्तियों के विकास के बजाय बीज के उत्पादन में लगाने के लिए बने होते हैं। इसलिए, इस उत्पाद को नहीं बेचा जा सकता है। इससे सूरज की गर्मी से होने वाले पानी के वाष्पीकरण को रोका जा सकता है।

दुनिया के आधे से ज्यादा पालक उत्पादन को रिप्रंकलर के माध्यम से सींचा जाता है। हालांकि, कुछ मामलों में, ज्यादा स्प्रिंकलर सिंचाई से पत्तियों पर धब्बों का शेग उत्पन्न हो सकता है।

स्वस्थ और हरे–भरे पालक कैसे उगायें

आमतौर पर, पालक को ठण्डे मौसम की जरूरत होती है, इसलिए ज्यादातर किसान इस बसन्त ऋतु की शुरूआत में या पतझड़ के अन्त में लगाना शुरू करते हैं। बहुत से किसान बसन्त के आखिरी पाले से लगभग छः सप्ताह पहले पालक लगाना पसन्द करते हैं। ठण्डे बसन्त वाले क्षेत्रों में बसन्त ऋतु के अन्त समय तक (मध्य मई), हर दस दिन पर बीज बोये जा सकते हैं। पालक को गर्म जलवायु में बोते समय, हम

*एम.एस.सी. उद्यान, डॉ. भीमराव अम्बेडकर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, लखनऊ, **एम.एस.सी. सब्जी विज्ञान, उद्यान महाविद्यालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या, उत्तरप्रदेश

उन्हें गेहूँ, बीन्स या मकई जैसी लम्बी फसलों की छाया में भी बो सकते हैं।

अपनी किस्म के आधार पर, पालक 50–70^{0}F (10–21^{0}C) के बीच के तापमान में उगाया जा सकता है। जब हम पालक को बसन्त या पतझड़ में लगाने का फैसला करते हैं, तो हल्की छाया और अच्छी जल निकासी वाली धूपदार जगह पर पालक लगाना सही होता है। सर्दियों के दौरान, हम अपने पौधों को कोल्ड फ्रेम से बचा सकते हैं या उन्हें घास से ढंक सकते हैं। किसान अक्सर 40^{0}F (5^{0}C) पर पहुंचने के बाद ही इन सुरक्षा उपायों को हटाते हैं।

ज्यादातर मामलों में, पालक सीधे खेत में बोया जाता है। किसान सीधे जमीन पर पंक्तियों में पालक के बीज (ज्यादातर संकर) लगा सकते हैं। पौधों को बढ़ने के लिए बीज में पर्याप्त जगह की आवश्यकता होती है। सीधे बीज बोने पर, 4–4, 8 इंच (2.5–3 सेमी) की गहराई में पंक्तियों में बीज लगाते हैं। निरन्तर उत्पादन के लिए, हम हर 10–15 दिनों में बीज बो सकते हैं।

अच्छा विकास पाने के लिए और अपनी पैदावार बढ़ाने के लिए किसान निम्न कारकों को ध्यान में रख सकते हैं:–

बीजारोपण की दरः प्रति हेक्टेयर 40 से 60 पाउंड (20 से 30 किग्रा) बींज ० बीजों का अंकुरण 44–68^{0}F 6–20^{0}C तापमान में बेहतर होगा। पालक के बीजों को हल्की मिट्टी से ढंकते हुए 1/2 से 1 इंच (1 से 25 सेमी) की गहराई में लगाने की आवश्यकता होती है।

पौधों के बीच की दूरीः पंक्तियों के बी 7–44 इंच (20–30 सेमी) दूरी और पंक्ति में पौधों के बीच 3–6 इंच (7–45 सेमी) की दूरी होनी चाहिए।

पालक के बीज बोने के तुरन्त बाद किसान खेत की सिंचाई कर देते हैं।

पालक के साथ अक्सर कोई दूसरा पौधा भी लगाया जाता है। किसान पालक के पौधों की पंक्तियों के बीच दूसरे पौधे लगा सकते हैं, जिसके लिए अक्सर गोभी और प्याज का प्रयोग किया जाता है।

पौधों में पत्ती की बेहतरीन सतह को प्रोत्साहित करनेलिए पौधों को पतला किया जाता है। प्रसंस्करण बाजार के लिए पालक उगाते समय, यह सबसे सामान्य तौर पर प्रयोग की जाने वाली तकनीक है।

पालक की फसल में नियमित लेकिन ज्यादा पानी न देने से मिट्टी नम बनी रहती है।

जंगली घास के प्रबन्धन को अनदेखा नहीं किया जा सकता। जंगली घास न केवल पालक को मिलने वाले पोषक तत्वों और सूरज की रोशनी के लिए उनके साथ मुकाबला करते हैं, बल्कि उनको बीच उचित वायु संचार भी भी रोकती है, जिससे पौधों की बीमारी लगने की ज्यादा संभावना होती है।

किसान स्वस्थ और उच्च गुणवत्ता वाले पालक उगाने के लिए उचित योजना बनाने के लिए स्थानीय वैज्ञानिकों से सलाह ले सकते हैं।

पालक की फसलों में पोषक तत्वों का प्रबन्धन

पालक औसत मिट्टी में भी पत्तियां उगा सकता है, लेकिन पोषक–तत्वों से भरपूर मिट्टी में वह ज्यादा फलता–फूलता है। कई अनुभवी किसान बीज बोने से कुछ दिन पहले मिट्टी में कम्पोस्ट और फास्फोरस की खाद का मिश्रण डालते हैं। फॉस्फोरस की गंभीर कमियों के मामले में, किसान बीज बोने से कुछ दिन पहले प्रति हेक्टेयर 50 किलोग्राम की दर से पी$_2$ओ$_5$ डाल सकते हैं।

बहुत सारे किसान फर्टिगेशन का उपयोग करते हैं, अर्थात वो सिंचाई प्रणाली में पानी में घुलनशील उर्वरकों का समावेश कर देते हैं। इस तरह वे पैदावार को बढ़ावा दे सकते हैं और पौधों में एक साथ खाद और पानी देकर समय भी बचा सकते हैं। कोई भी फर्टिगेशन विधि प्रयोग करने से पहले निर्माता के निर्देशों का पालन करने का सुझाव दिया जाता है।

पालक एक पत्तेदार सब्जी है और हम इसकी पत्तियों को इकट्ठा करने लिए इसे उगाते हैं। इसके परिणामस्वरूप, ज्यादातर मामलों में किसान पत्ती की कुल सतह को बढ़ाने के लिए पौधे की वृद्धि के विभिन्न चरणों के दौरान नाइट्रोजन और फॉस्फोरस डाल सकते हैं। पालक के प्रकार (सेवाय बनाम चिकन) के आधार पर, पालक को प्रति हेक्टेयर 70–80 किलोग्राम नाइट्रोजन की जरूरत होती है।

जैविक खेती के मामले में, हम नाइट्रोजन से भरपूर जैविक उर्वरक का प्रयोग कर सकते हैं। पालक के पौधे बढ़ने के दौरान, जैविक उर्वरक एक या दो बार डाला जा सकता है। हम अन्य स्रोतों (जैसे मछली

पायसन आदि) के साथ मिश्रित कम्पोस्ट खाद का भी उपयोग कर सकते हैं। ज्यादातर मामलों में जैविक खाद गर्मी के महीनों के दौरान जंगली घास पर नियंत्रण और मिट्टी की नमी के संरक्षण में मदद करती है। इस बात का ध्यान रखना जरूरी है कि किसी भी प्रकार का खाद छोटे पौधों के सम्पर्क में न आये नही तो समस्या हो सकती है। खाद डालने के बाद, फसलों की सिंचाई करने का सुझाव दिया जाता है।

कीड़े और बीमारियां

पालक के पौधों में अक्सर कीड़े और बीमारियां लग जाती है। पर्यावरण के अनुकुल समाधान निकालकर उनका सामना करने के लिए अपने स्थानीय फसल के दुश्मनों को जानना जरूरी है। कार्यवाही करने से पहले किसान पालक के कीड़ों और बीमारियों के उचित नियंत्रण के लिए स्थानीय कृषि वैज्ञानिकों से परामर्श ले सकते हैं।

कीड़े

एफिड्स एफिडः आमतौर पर पालक के पौधों का सबसे आम दुश्मन होता है। वयस्क और निग्फ पौधे के जूस पर जिन्दा रहते हैं, जिन्हें बाजार में नहीं बेचा जा सकता है।

लीफ माइनरः ये ज्यादातर पत्तियां खाते हैं।

स्लग और घोंघेः ये दोनों अक्सर गीली मिट्टी से निकलते हैं और पत्तियों पर हमला करते हैं। उनका ठीक से सामना न करने पर वो पूरा पौधा भी खा सकते हैं।

बीमारियां

मोज़ेक वायरसः यह वायरस लगभग 50 विभिन्न प्रकार की सब्जियों और पौधों को संक्रमित कर सकता है। हम पत्तियों के उतरे हुए रंग को देखकर इसकी पहचान कर सकते हैं। संक्रमित पत्तियों में पीले और सफेद धब्बे होते हैं। पौधों का आकार बढ़ना बन्द हो जाता है और वे धीरे–धीरे मर जाते हैं।

कोमल फफूंदीः यह बीमारी पेरोनोस्पोरा फेरिनोसा के कारण होती है। हम पत्तियों को देखकर इसकी पहचान कर सकते हैं। वे अक्सर मुड़ी हुई होती हैं और फफूंदी और काले धब्बे लगे होते हैं।

स्पिनच ब्लाइटः यह वायरस पत्तियों को प्रभावित करता है। संक्रमित पत्तियां बढ़ना बन्द कर देती हैं और उनका रंग पीलापन लिए हुए भूरे रंग का होने लगता है।

कीड़े और बीमारी पर नियंत्रण

कार्यवाही करने के बजाय रोकथाम करना कीड़ों और बीमारियों को नियंत्रित करने का सबसे अच्छा तरीका होता है। पालक के किसानों को निम्नलिखित उपायों को ध्यान में रखना चाहिए–

- प्रमाणित बीज के उपयोग का सुझाव दिया जाता है। ज्यादातर मामलों में, किसान संकर किस्मों का चयन करते है, जिनमें बोल्टिंग और कोमल फफूंदी के लिए प्रतिरोधक क्षमता होती है।
- बीजों का कम अंकुरण या अनुपयुक्त अंकुरण दर कीड़ों और रोगों के नकारात्मक प्रभावों को तेज करेगा।
- अपर्याप्त उर्वरीकरण या सिंचाई से नकारात्मक प्रभावों को गति मिलेगी।
- स्थानीय कृषि वैज्ञानिक से सलाह लेने के बाद ही रासायनिक नियंत्रण के उपायों की अनुमति दी जाती है।
- कुछ बीमारियों को नियंत्रित करने के लिए फसल चक का प्रयोग किया जा सकता है।

पालक की कटाई

कटाई का समय इस बात पर निर्भर करता है कि हम पालक ताजे बाजार के लिए उगा रहे हैं या प्रसंस्करण बाजार के लिए ज्यादातर मामलों में ताजा बाजार के लिए उगाये जाने वाले पालक के पौधों को बीज लगाने के लगभग 38–55 दिनों में ही एक बार में काट दिया जाता है। इसके विपरीत प्रसंस्करण बाजार के लिए उगाये जाने वाले पालक के पत्तों को बीजारोपण के लगभग 60–80 दिनों में काटा जाता है। कई मामलों में, पहली बार कटाई करने के बाद दोनों ताजा और प्रसंस्करण पौधों को दोबारा बढ़ने के लिए छोड़ दिया जाता है, ताकि किसान दूसरी बार फसल की कटाई कर सके।

प्रति हेक्टेयर पालक की उपज

पालक की औसत उपज प्रति हेक्टेयर 20–30 टन होती है। जाहिर तौर पर अनुभवी किसान कई सालों के अभ्यास के बाद ऐसी बड़ी फसल पा सकते हैं। एक ही फसल की कई बार कटाई करने पर, हम 2–3 कटाई सत्रों से हर सत्र में प्रति हेक्टेयर 10–15 टन पालक पा सकते है।

हरी खाद एक वरदान

विशाल सिंह*, कुलदीप सिंह* एवं अंकिता राव*

मृदा के लगातार अतिदोहन से उसमें मौजूद पोषक तत्व नष्ट हो रहे हैं इसके फलस्वरूप पौधों को पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्व नहीं मिल पाते हैं। इसकी क्षतिपूर्ति तथा मिट्टी की उपजाऊ शक्ति को बनाए रखने के लिए हरी खाद एक उत्तम विकल्प है। हरी खाद का प्रयोग प्राचीन काल से होता रहा है। हरी खाद उस फसल को कहते हैं जिसका उद्देश्य भूमि में पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ाने या उसमें जैविक पदार्थ की पूर्ति सुनिश्चित करना है। इस फसल को हरी स्थिति में हल प्रयोग द्वारा मिट्टी में दबा दिया जाता है। इस प्रकार रासायनिक खादों द्वारा होने वाली तमाम समस्याओं से छुटकारा मिल सकता है।

बढ़ती जनसंख्या को पर्याप्त मात्रा में खाद्य पदार्थों की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए मिट्टी पर दबाव बढ़ता जा रहा है। इस प्रकार मिट्टी के दोहन से उसमें उपस्थित पोषक तत्व नष्ट हो रहे हैं। एक निश्चित भूमि पर मुख्य फसल उगाने से पूर्व हरी खाद फसल को उगाकर एक निश्चित अवधि के पश्चात पाटा चलाकर पलटने वाले हल के प्रयोग द्वारा मिट्टी में सड़न के लिए छोड़ दिया जाता है। मिट्टी में मौजूद सूक्ष्म जीव इसे कुछ समय में अपघटित कर देते है। इसका उपयोग सर्वप्रथम काटो नामक वैज्ञानिक ने किया था। इनके अनुसार हरी खाद का उपयोग उस भूमि में कर सकते हैं जहां पशुओं की खाद उपयोग में नहीं लाई जा सकती। वर्तमान समय में हरी खाद 6.7 मिलियन हेक्टेयर भूमि पर उगाई जा रही है (कृषि सांख्यिकी, 2005) मुख्यतः हरी खाद उगाने वाले राज्य निम्न हैः

आंध्रप्रदेश (41 प्रतिशत)
उत्तरप्रदेश (16 प्रतिशत)
कर्नाटक (11 प्रतिशत)
पंजाब (5 प्रतिशत)।

हरी खाद का वर्गीकरण :–

स्थानीय विधिः इस विधि में हरी खाद फसल को उसी खेत में उगाया जाता है जिसमें इसका प्रयोग करना होता है। निश्चित खेत में मुख्य फसल उगाने से पूर्व हरी खाद फसल को उगाकर एक निश्चित समय के बाद पाटा चलाकर पलटने वाले हल के प्रयोग से मिट्टी में सड़ने के लिए छोड़ दिया जाता है। आमतौर पवर्तमान समय में इस कार्य हेतु रोटावेटर का उपयोग किया जा रहा है जिससे कि मिट्टी में मिलाए गए पौधों का विघटन सूक्ष्म जीवों द्वारा आसानी से हो जाए। यह विधि समुचित वर्षा या पर्याप्त सिंचाई वाले क्षेत्रों में अपनाई जाती है। फूल आने से पहले वनस्पतिक वृद्धि काल (45–60 दिनों) में मिट्टी में पलट दिया जाता है।

हरी पत्तियों से खाद

इस विधि में हरी खाद की फसल को दूसरे क्षेत्रों में उगाकर उनकी पत्तियो तथा कोमल शाखाओं को तोड़कर जरूरत वाले क्षेत्र में मिट्टी के नीचे दबा देते हैं। यह विधि कम वर्षा वाले क्षेत्र में उपयोगी होती है।

आदर्श हरी खाद फसल के मुख्य गुण

- कम अवधि में तेजी से विकास तथा उच्च पोषक तत्व संचय करने की क्षमता।
- प्रचुर मात्रा में रसीला शाखा तथा पत्तों का उत्पादन करना
- कम समय में अधिक मात्रा में वायुमंडलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करने की क्षमता

रोग प्रतिरोधक क्षमता तथा उच्च अपघटन दर

खरपतवारो को दबाते हुए जल्दी बढ़त प्राप्त करे तथा विपरीत परिस्थितियों में उगने की क्षमता हो

हरी खाद फसल उगाने की विधि

असिंचित क्षेत्र में मानसून के तत्काल बाद तथा सिंचित क्षेत्र में मानसून से 10–15 दिन पहले हरी खाद फसल के बीज बोना चाहिए। फसल को मृदा की क्षमता के अनुसार पोषक तत्व डालने होते हैं। फसल को 40–45 दिन या फूल आने पर मिट्टी में पाटा चलाकर दबा दिया जाता हैं। इस बात का ध्यान रखें कि खेत में पर्याप्त मात्रा में नमी हो जिससे फसल को पलटने में सुगमता तथा उसके अपघटन में अधिक समय ना लगे। हरी फसल के बाद लगने वाली मुख्य फसल में

*शोध छात्र, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या, उत्तरप्रदेश

आमतौर पर नत्रजन की आवश्यकता कम होती हैं।

हरी खाद फसल की गुणवत्ता बढ़ाने के उपाय

उपुयक्त फसल का चयन

स्थानीय मौसम तथा मिट्टी की स्थिति के अनुरूप फसल का चुनाव करना होता है। सामान्य मृदा में सनई तथा ढैंचा फसलें अच्छा परिणाम देती है परन्तु क्षारीय एवं लवणीय मृदा में ढैंचा की उपयोगिता अच्छी होती है। मूंग उड़द आदि उपर्युक्त फसलों के अपेक्षाकृत कम गुणवत्ता वाली होती है।

पलटाई का समय

सामान्यतः हरी खाद फसल बुवाई के 7–8 सप्ताह के बाद मृदा में पलट दिया जाता है अन्यथा आयु बढ़ने के साथ–साथ पौधों में रेशे की मात्रा भी बढ़ती है जिससे इनके सड़न में ज्यादा समय लगता है।

हरी खाद फसल के प्रयोग के बाद अगली फसल

धान उत्पादक क्षेत्रों की जलवायु नम तथा तापमान अधिक होने के कारण अपघटन की प्रक्रिया तेज होती है अतः धान की रोपाई हरी फसल के पलटाई के तत्काल पश्चात की जा सकती है। यदि हरी खाद फसल रसीला है तो पलटाई के तत्काल बाद धान की रोपाई की जा सकती है अन्यथा कुछ समय पश्चात होती है।

हरी खाद के लाभ

- यह मिट्टी में पोषक तत्वों की पर्याप्त उपलब्धता सुनिश्चित करती हैं।
- खरपतवारों के नियंत्रण में सहायक तथा मृदा जनित रोगों में कमी।
- हरी खाद लवणीय तथा क्षारीय मिट्टी के सुधार में भी सहायक हैं।
- मृदा में नाइट्रोजन तथा जीवाश्म की मात्रा में बढोत्तरी, दलहनी फसलों द्वारा मृदा में नाइट्रोजन बढ़ती है।

हरी खाद के प्रयोग में कठिनाई

- उत्तम गुणवत्ता वाले बीजों की अनउपलब्धता।
- हरी खाद फसल के अपघटन हेतु जल का सही समय पर ना मिल पाना।
- हरी खाद को लेकर किसानों में जागरूकता की कमी वे मानते हैं कि 6 – 7 सप्ताह बर्बाद करने का कोई फायदा नहीं है।
- हरी खाद फसल में पुष्प शीघ्र ही आ जाते हैं जिससे बायोमास का उत्पादन कम होता है।

हरी खाद फसल की जरूरत

- अधिक उत्पादन प्राप्त करने हेतु अधिक मात्रा में उर्वरकों रसायनिक खादों का प्रयोग होता है परिणामस्वरूप भूमि की उर्वरा शक्ति धीरे–धीरे नष्ट हो रही है तथा पर्यावरण प्रदूषण भी बढ़ रहा है।
- रसायनिक खादों व कीटनाशकों के अत्यधिक इस्तेमाल से किसानों की लागत बढ़ रही है फलस्वरूप कृषि ऋण का बोझ भी बढ़ता जा रहा है।

आदर्श हरी खाद फसल के मुख्य गुण

- कम अवधि में तेजी से विकास तथा उच्च पोषक तत्व संचय करने की क्षमता।
- प्रचुर मात्रा में रसीला शाखा तथा पत्तों का उत्पादन करे।
- कम समय में अधिक मात्रा में वायुमंडलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करने की क्षमता।
- रोग प्रतिरोधक क्षमता तथा उच्च अपघटन दर।
- खरपतवारो को दबाते हुए जल्दी बढ़त प्राप्त करे तथा विपरीत परिस्थितियों में उगने की क्षमता।

किसान भाइयों,

लगातार फसल उगाने से मृदा के स्वास्थ्य में हो रही गिरावट के कारण कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता में स्थिरता की स्थिति हो गयी है। समय रहते खेत की मिट्टी की दशा को सुधारने एवं उर्वरकों का संतुलित मात्रा में प्रयोग करने के लिए आवश्यक है कि किसान भाई अपने खेत की मिट्टी की जाँच करवाने के प्रश्चात संस्तुति मात्रा में सुंतुलित उर्वरक का प्रयोग करें तथा मृदा स्वास्थ्य कार्ड अवश्य बनवायें। फसल अवशेष को न जलाएं उसका प्रबन्ध कर मृदा स्वास्थ्य को बढ़ाएं। खेत को खाली न छोड़ें बल्कि हरी खाद हेतु सनई व ढैचा पलटकर हरी खाद बनायें। जीवांशिक खादों का अधिक से अधिक प्रयोग कर मृदा स्वास्थ्य को बढ़ाने पर बल दें।

फलदार फसलों के लिए घातक है जलवायु परिवर्तन

वर्तिका सिंह* एवं डॉ. भगवान दीन**

पूरे विश्व भें चीन के बाद भारत में सबसे अधिक फलों का उत्पादन होता है। राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड द्वारा प्रकाशित राष्ट्रीय बागवानी डेटाबेस द्वितीय अग्रिम अनुमान के अनुसार 2019–20 के दौरान भारत में लगभग 666 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल में फल उगाए गये तथा 99.00 मिलियन में मीट्रिक टन तक फलों का उत्पादन हुआ। हमारे देश में आम, केला, संतर, अंगूर, अमरूद, पपीता अनानास, अनार इत्यादि प्रमुख फलों के रूप में उगाए जाते हैं तथा अपने स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होने के कारण बाजार में इनकी मांग तथा खपत भी खूब रहती है ।

वर्तमान समय में जन जीवन में कई प्रकार की समस्याए सामने आ रही हैं, जिससे हमारा स्वास्थ्य, पर्यावरण, मृदा, पशु–पालन सभी प्रभावित हो रहे हैं। जिसका एक मुख्य कारण जलवायु परिवर्तन हैं। आज जलवायु परिवर्तन ने हमारे प्रकृति तथा मानव जांति दोनों के लिए विशेष संकट का रूप ले लिया है। भारत में कृषि क्षेत्र जलवायु परिवर्तन की चपेट में है। मौसम में अत्यधिक बदलाव हानिकारक मौसम की घटनाओं में परिवर्तित हो जाता है जैसे अधिकतम या न्यूनतम तापमान, नमी, अत्यधिक वर्षा तथा आवश्यकता से कम वर्षा, चक्रवात, सर्दियों के तूफान, ओला वृष्टि आदि फसल की पैदावार पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं तथा खरपतवार और कीट प्रसार /पादप रोग को बढ़ावा देते हैं।

किसी क्षेत्र या शहर की जलवायु उसका विशिष्ट या औसत मौसम है। पृथ्वी की जलवायु विश्व की समस्त क्षेत्रीय जलवायु का औसत है। अतीत में, पृथ्वी की जलवायु गर्म और ठंडी अवधियों से गुजरी है, जिनमें से प्रत्येक हजारों वर्षों तक चलती है। जलवायु को कभी–कभी मौसम समझ लिया जाता है। लेकिन जलवायु मौसम से अलग है क्योंकि इसे लंबे समय तक मापा जाता है, जबकि मौसम दिन–प्रतिदिन या साल–दर–साल बदल सकता है। किसी क्षेत्र की जलवायु में मौसमी तापमान और वर्षा का औसत और हवा प्रतिरूप शामिल होते हैं। राष्ट्रीय भवन संहिता, 2005 (एनबीसी) के अनुसार, भारत को पांच प्रमुख जलवायु क्षेत्रों में विभाजित किया गया है– 1. गर्म और आर्द्र क्षेत्र, 2. गर्म और शुष्क क्षेत्र, 3. समशीतोष्ण क्षेत्र, 4. समग्र क्षेत्र, 5. ठंडा और बादल क्षेत्र, 6. ठंडा और धूप क्षेत्र। उदाहरण के लिए, रेगिस्तान को शुष्क जलवायु कहा जाता है क्योंकि पूरे वर्ष में दौरान बहुत कम पानी गिरता है, जैसे बारिश या बर्फ। अन्य प्रकार की जलवायु में उष्णकटिबंधीय जलवायु शामिल हैं, जो गर्म और आर्दर होती हैं, और समशीतोष्ण जलवायु होती है, जिसमें गर्म ग्रीषकाल और ठंडी सर्दियाँ होती हैं।

जलवायु परिवर्तन किसी स्थान पर तापमान और विशिष्ट मौसम के प्रतिरूप का दीर्घकालिक परिवर्तन है। जलवायु परिवर्तन किसी विशेष स्थान या संपूर्ण ग्रह को संदर्भित कर सकता है। जलवायु परिवर्तन के कारण भारत के कृषि आश्रित विभिन्न राज्यों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। फलदार वृक्ष जलवायु परिवर्तन के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं ।

जलवायु परिवर्तन से फलदार फसलों पर प्रभाव कुछ इस प्रकार है–

1. उच्च तापमान के परिणाम स्वरुप फलों के पकने की प्रक्रिया समय से पूर्व हो जाती है तथा फल परिपक्व हो जाते हैं जिससे इन फलों का भंडारण समय घट जाता है और फल बाजार में उच्च मूल्य प्राप्त नहीं कर पाते।

2. लंबी अवधि वाले छायादार बादलों के कारण फलों में मिठास कम हो जाती है।

3. फलदार वृक्षों का मात्रात्मक (कुल उपज) और गुणात्मक उत्पादन, उसका परागण तथा मौसम पर निर्भर करता है अत्यधिक शीत तथा शुष्क जलवायु से फूलों का लगना प्रभावित होता है।

इसी प्रकार अल्प तापमान और उच्च आर्द्रता से फूलों का विकास रुक जाता है, जिससे फल वृक्षों में फूलों की संख्या में गिरावट आ जाती है । उच्च तापमान से भी फूल अधिक मात्रा में गिरते हैं जिससे वृक्षों में कम फल लगते हैं।

*शोध छात्रा, **प्राध्यापक फल विज्ञान एवं परा उपज प्रबंधन विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय अयोध्या, उत्तर प्रदेश

4. अनावश्यक जलवायु के कारण रोगजनक सूक्ष्मजीवों की वृद्धि होती है जिससे विभिन्न प्रकार के पादप रोग उत्पन्न होते हैं।

5. वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड की वृद्धि से फलों की गुणवत्ता पर ”भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

फलदार वृक्षों को जलवायु परिवर्त से होन वाले प्रभाव से बचाने के लिए. निम्नलिखित विधियाँ इस प्रकार हैंः–

फलदार वृक्षों

दिशा सी को विशेषकर पश्चिम तथा उत्तर दिशा में लगाना चाहिए क्योंकि पूर्व और दक्षिण दिशा में मै न्जक गए वृक्ष अन्य दिशाओं की तुलना में सूर्य के प्रकाश के संपर्क में रहने से अधिक प्रभावित होते हैं।

चक्रवाती हवाओं से होने वाले दुष्प्राध को कम करने के लिए फल बगीचे में चारों दिशाओं में मोटे तथा लंबे उगने वाले वृक्ष लगाना चाहिए।

फलदार वृक्षों को मजबूत तथा प्रतिरोधी बनाने के लिए अनुशंसित मात्रा में सूक्ष्म पोषक तत्व और उर्वरक को डालना चाहिए।

फलों के बागों में पर्याप्त रूप से नमी बनाए रखने के लिए नियमित सिंचाई करनी चाहिए।

गर्मी के प्रकोप को कम करने के लिए फलदार वृक्षों के मुख्य तथा छोटी शाखाओं में सफेद पुताई कर सकते हैं।

फल वृक्षों के थालो में पलवार फैलाने से तापमान नियंत्रित रहता है।

सर्दियों में फलों के बागों में नियमित रूप से सिंचाई करना चाहिए।

फलों के बाग के लिए गर्मी और ठंड प्रतिरोधी किस्मों का चयन करे।

अब रूमय आ गया हैं कृषक भाइयों को सचेत होने का जिससे हम सभी मंथन कर सके कि कैसे जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम किया जा सकता है, आने वाले दिनों में इससे कृषि आय भी 45 – 25 प्रतिशत तक प्रभावित हो सकती हैं।

(पृष्ठ 06 का शेष)

लेकिन वर्षाऋतु में अधिक आर्द्रता होने पर हल्दी की पत्ती धब्बा बीमारी, जिसमें पत्तों के दोनों ओर भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं, तेजी से फैलती है। धब्बे प्रायः पत्तों की ऊपरी सतह पर अधिक होते हैं। पत्ते विकृत आकार के तथा लाल–भूरे रंग के हो जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए स्वस्थ व रोगरहित बीज कंदो का चुनाव करना चाहिए तथा फसल की बीमारी से प्रभावित पत्तियों को इकट्ठा करके जला दें या जमीन में दबा दें और खड़ी फसल में इण्डोफिल एम–45 (25 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी) या स्कोर 25 ई.सी. या टिल्ट 25 ई.सी. (10 मि. ली. प्रति 10 लीटर पानी) में घोल बनाकर 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें। संभव हो सके तो हल्दी की फसल दूसरे वर्ष उसी खेत में न लगाएं। कन्द गलन या गठ्ठी सड़न रोग जिसमें गांठ सड़ जाती है और पत्तियाँ भूरी हो जाती हैं की रोकथाम के लिए बिजाई से पहले कंदों का उपचार कर लें।

हल्दी की फसल में तना छेदक व पत्ती छेदक कीटों का प्रकोप होने पर 1.5 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस 36 एस॰ एल॰ या 1 मि॰ ली॰ क्वीनलफॉस 25 ई॰ सी॰ प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

कभी–कभी हल्दी की फसल में सफेद गिडार का आक्रमण भी देखा गया है। यह कीट जमीन में रहकर गठ्ठियो को खाता रहता है। इस कीट के नियन्त्रण हेतु बिजाई के समय 2 लीटर क्लोरपाइरीफॉस 20 ई॰ सी॰ 25 कि॰ ग्रा॰ सूखी रेत में मिलाकर प्रति हेक्टेयर के हिसाब से खेत में डालें।

खुदाई एवं उपज

हल्दी की फसल 7–9 माह में तैयार हो जाती है। इस प्रकार फरवरी–मार्च में हल्दी के कंदों को खुदाई करके निकाला जाता है। कंदों को साफ करके उनका ढेर लगाकर रखा जाता है। अच्छी फसल होने पर 18–20 क्विंटल ताजी हल्दी प्रति बीघा प्राप्त होती है, जो प्रोसेसिंग (सुखाने) के बाद 4.5 – 5.0 क्विंटल प्रति बीघा रह जाती है।

प्याज में एकीकृत नाशीजीव प्रबंधन

राहुल सिंह राघुवंशी* एवं डॉ हेमंत कुमार सिंह**

भारत में विभिन्न प्रकार की सब्जियों की खेती में प्याज का बड़ा महत्व है जो एक शल्क कंदीय फसल के रूप में जानी जाती है। प्याज एक बहुगुड़ी फसल है जिसका प्रयोग सलाद, मसाला, अचार एवं सब्जी बनाने में होता है। प्याज का उपयोग जहां पौष्टिकता बढ़ाने में होता है वहीं पर इसके औशधीय गुण होने के कारण मूत्र विसर्जन, पेचिस, कालरा एवं जले एवं घावों के उपचार में किया जाता है। प्याज उत्तर भारत के क्षेत्रों में रबी के मौसम में उगायी जाती है। भारत में महाराष्ट्र, तमिलनाडु, गुजरात, आंध प्रदेश, बिहार, उत्त्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा एवं कर्नाटक एक प्रमुख प्याज उत्पादक राज्य हैं। प्याज की उत्पादकता पर कीट एवं रोग अत्यधिक प्रभाव डालतें हैं जिसमें फसलों को विभिन्न प्रकार से क्षति पहुँचती है। मुख्य रूप से कीट जैसे प्याज का थ्रिप्स, कटुवा सूंडी (कट वर्म) व शीर्ष छेदक एवं रोग जैसे आद्र गलन (डैपिंग ऑफ), बैंगनी धब्बा (परपल ब्लाच), भूरा विगलन एवं झुलसा रोग (स्टैम्फीलियम ब्लाइट) प्रमुख है।

कीट एवं रोग प्रबंधनः

कीटः

कटुवा सूंडी (कटवर्म): यह एक रात्रि चर कीट है जो मटमैले भूरे रंग का होता है। यह प्याज के पौधों को जमीन की सतह से काट देते हैं जिससे पौधे गिर जाते हैं और सूखकर मर जाते हैं।

प्रबंधनः

1. गर्मी में खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए।

2. पौध रोपण से पहले खेत में कार्बोफ्यूरॉन 1 किग्रा सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर के हिसाब से मिला दें।

3. पौध रोपण के पश्चात इस कीट का प्रकोप होने पर क्लोरोपायरीफास 20 ई0सी0 नामक दवा 2 मिली प्रति लीटर पानी में मिलाकर शाम के समय छिड़काव करें।

थ्रिप्स कीटः यह एक छोटे आकार का कीट होता है जिसके शिशु एवं वयस्क दोनों पत्तियों से रस चूसते हैं। पत्तियों पर सफेद धब्बें बनते हैं जो बाद की अवस्था में पीले सफेद हो जाते हैं। यह कीट शुरू की अवस्था में पीले रंग का होता है जो आगे चलकर काले भूरे रंग का हो जाता है।

प्रबंधनः

1. प्याज के बीज को इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्ल्यू.एस. पाउडर से (2.5 ग्राम प्रति किग्रा बीज) शोधित करके बोना चाहिए।

2. मुख्य खेत में रोपाई के उपरांत डाईमेथोएट 30 ई. सी. की 1 मिली मात्रा या फॉस्फामिडॉन 85 ई.सी. 0.6 मिली की 1 मिली मात्रा प्रति लीटर में मिलाकर 2–3 छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर करें।

शीर्ष बेधक कीट (हेलिकोवर्पा की सूंडी)

इस कीट की सूंडी क्षतिकारक होती है जिसकी पीठ पर तीन धारियां पाई जाती हैं। जो प्याज बीज उत्पादन के लिए लगाई जाती है उसमें यह ज्यादा नुकसान पहुँचाती है। यह फूल की अवस्था में आक्रमण करता है जिससे बीज नहीं बनने पाता।

प्रबंधनः

1. गर्मी में खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए।

2. सेक्स फेरोमोन ट्रैप का प्रयोग करना चाहिए।

3. एच.एन.पी.बी. विषाणु की 300 एल.ई. (सूंडी समतुल्य) मात्रा में 1 किग्रा0 देशी गुड़ व 0.01ः इंडोट्रान 100 एक्स. (चिपकने वाला पदार्थ) को 800 लीटर पानी में मिलाकर 2–3 बार छिड़काव करना चाहिए।

4. कीट का आक्रमण होने पर इंडोसल्फान 35 ई.सी. की 2 मिली. दवा एक लीटर पानी में मिलाकर आवश्यकतानुसार छिड़काव करना चाहिए।

*शोधछात्र, **सह प्राध्यापक (पादप रोग विभाग), आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या, उत्तरप्रदेश

रोगः

बैगनी धब्बा (परपल ब्लाच): यह रोग फंफूद (अल्टरनेरिया पोरी) से होता हैं जिसमें प्याज की पत्तियों, तनो एवं डंटलों पर छोटे– छोटे गुलाबी रंग के धब्बें पड़ जाते हैं। इस रोग से भंडारण के समय में प्याज सड़ने लगती है जिससे भारी क्षति होती है।

प्रबंधनः

1. बुवाई से पूर्व प्याज के बीज को थीरम 2.5 ग्राम प्रति किग्रा. से शोधित करना चाहिए।

2. इस रोग का प्रकोप मुख्य खेत में होने पर क्लोरोथैलोनिल 75 प्रतिशत की 2 ग्राम मात्रा का डाइथेन एम–45 की 2.5 गाम मात्रा प्रति ली0 पानी के साथ 0.01 सैंडोविट या कोई चिपचिपा पदार्थ अवश्य मिलाकर 10 दिन के अंतराल पर 3–4 छिड़काव करना चाहिए।

आद्रगलन (डैम्पिंग ऑफ): यह एक पौधशाला में लगने वाला कवक जनित प्रमुख रोग है। जिसमें पौधा जमीन के ऊपर आने से पहले ही गिरकर मर जाता है जो नम एवं गर्म जलवायु में तेजी से बढ़ता है।

प्रबंधनः

1. पौधशाला में बुवाई से पूर्व प्याज के बीज एवं भूमि शोधन (ट्राइकोडर्मा 10 ग्राम प्रति वर्ग मीटर) अवश्य करना चाहिए।

2. बीज शोधन के लिए 5–6 ग्राम ट्राइकोडर्मा प्रति वर्ग मीटर से उपचारित करना चाहिए।

3. इस रोग का प्रकोप होने पर पौधों की जड़ों के पास कार्बेन्डाजिम की 1 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

झुलसा रोग (स्टैम्फीलियम ब्लाइट): इस रोग का प्रकोप होने पर पत्तियों की शुरू की अवस्था पर एक तरफ सफेद पीली हो जाती है और दूसरी तरफ पत्तियां हरी होती है और प्रकोप ज्यादा होने पर भूरी होकर काली हो जाती है।

प्रबंधनः

1. बीज का उपचार करना चाहिए।

2. रोग की रोकथाम के लिए डाइथेन एम–45 का 0. 25 प्रतिशत घोल बनाकर उसमें चिपकने वाले पदार्थ सैंडोविट का 0.01: मात्रा मिलाकर 10–15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए।

भूरा विलगन रोगः यह बैक्टीरिया से फैलने वाला रोग है जो प्याज भण्डारण के समय में लगता है। इस बीमारी का प्रकोप प्याज के कंदों के गर्दन वाले भाग से शुरू होता है जो बाद में सड़कर गंध करने लगता है।

प्रबंधन

प्याज की खुदाई करने के उपरांत इसे अच्छी प्रकार से सुखा लेना चाहिए और भण्डारण कम नमी व हवादार कमरे में करना चाहिए।

पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये : खेती में आगे बढ़िये

- फसलोत्पादन, सब्जी उत्पादन, बागवानी, मत्स्य तथा पशुपालन विषय की वैज्ञानिक जानकारी देने वाली लोकप्रिय मासिक पत्रिका पूर्वाञ्चल खेती। चाहे प्रगतिशील किसान हों, बागवान हों या मत्स्य/पशुपालक, अनुसंधान/प्रसार कार्यकर्ता अथवा कृषि संकाय के छात्र तथा साथ ही साथ सभी के लिये उपयोगी आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, की हिन्दी मासिक पत्रिका पूर्वांचल खेती।
- पूर्वाञ्चल खेती की सदस्यता शुल्क रु0 270.00 मात्र (किसानों, छात्रों एवं लेखकों के लिए रू0 220.00 मात्र) है। जो निदेशक प्रसार, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या को मनीआर्डर/नकद भुगतान द्वारा प्रेषित किया जाना चाहिए। सदस्यता शुल्क भेजते समय अपना नाम व पता स्पष्ट अक्षरों में लिखना न भूलें। आपका सुझाव उत्तरोत्तर सुधार हेतु प्रार्थनीय है।

आधुनिक खेती प्रणाली में ड्रोन का उपयोग एवं महत्व

डॉ. संदीप कुमार पाण्डेय* एवं डॉ. प्रमोद कुमार मिश्रा*

भारत देश की बढ़ती हुई जनसंख्या, आधुनिक उद्योगों की स्थापना बड़े–बड़े एक्सप्रेसवे का बनाया जाना एवं कृषि की जमीन पर बड़े–बड़े शॉपिंग कंपलेक्स, भवनों का निर्माण इत्यादि के कारण कृषि जो खत्म होती जा रही है। जिसके कारण भविष्य में अन्न के उत्पादन में कमी का संकट उत्पन्न हो सकता है, जिसको ध्यान में रखते हुए दिन प्रति दिन देश में खेती करने के तरीके को बहुत हाईटेक करना होगा। कृषि क्षेत्र में ड्रोन प्रौद्योगिकी का उपयोग निरंतर बढ़ता जा रहा है। किसान अभी तक जुताई बुवाई और अन्य कृषि कार्य जैसे सिंचाई निराई गुड़ाई कटाई के लिए अत्याधुनिक कृषि यंत्रों जैसे सीड ड्रिल, बेलर, सेंसरयुक्त हैप्पी सीडर मल्चर मशीन, ड्रिलिंगमशीन, कंबाइनहार्वेस्टर इत्यादि का उपयोग करते आ रहे हैं। भारत में उन्नत कृषि की बढती संभावनाओं को देखते हुए इन्हीं तकनीकों में ड्रोन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है तथा भविष्य में इसकी और भी उपयोगिता हमारे मध्यम वर्ग के किसान भाइयों द्वारा प्रयोग की जाएगी। ड्रोन के उपयोग हेतु संस्थानों को कृषि मत्रांलय सहायता राशि भी प्रदान करेगा।

ड्रोन क्या है?

अत्याधुनिक कृषि यंत्रों का मानव रहित विमान (ड्रोन) को बैटरी की मदद से रिमोट कंट्रोल द्वारा चलाया जाता है। ड्रोन को जिस भी दिशा में चाहे रिमोट की मदद से घुमाया और स्थिर भी रखा जा सकता है ड्रोन में चार पंखे लगे होते हैं जिसकी मदद से यह आसानी से उड़ सकता है। ड्रोन एक फ्लाइंग डिवाइस है जो एक ऑटो पायलट और जीपीएस निर्देशक की मदद से पूर्व निर्धारित निर्देशों के साथ उड़ान भर सकता है। ड्रोन के मुख्य भाग जैसे ड्रोन प्रोपेलर या पंखे, मोटर, बैटरी, जीपीएस सेंसर, सिगनल रिसीवर, फ्लाइंग कंट्रोलर आदि हैं। ड्रोन के चलाने के लिए कुछ ग्राउंड सेट अप जैसे कम्युनिकेशन बॉक्स, रिमोट कंट्रोलर, लैपटॉप इत्यादि की आवश्यकता होती है। ड्रोन के प्रमुख अनुप्रयोग क्षेत्र जैसे की रक्षा क्षेत्र में, कृषि क्षेत्र में, खोज एवं बचाव, मनोरं जन एवं चल चित्र, वन्य जीव आकलन, स्वास्थ्य सुरक्षा, आपदा प्रबंधन, सुरक्षा एवं कानून अनुपालन में बहुतायत से प्रयोग किया जा रहा है।

ड्रोन का वर्गीकरण

वैज्ञानिक तरीके से ड्रोन को निम्न आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है–

1. उड़ने की ऊंचाई के आधार पर
2. आकार के आधार पर
3. वजन उठाने की दक्षता के आधार पर
4. क्षमता एवं पहुंच के आधार पर

परंतु ड्रोन को मुख्य रूप से इस की वायु गति की के आधार पर दो प्रकार में वर्गीकृत किया गया है–

1. घूमने वाले पंख
2. स्थिर पंख

ड्रोन में दो प्रकार का कंट्रोल सिस्टम होता है ।इसमें पहला ग्राउंड कंट्रोल स्टेशन तथा दूसरा रिमोट कंट्रोल स्टेशन होता है जो कि लैपटॉप के द्वारा या पर्सनल फ़ोन के द्वारा ऑपरेट किया जाता है लैपटॉप या पर्सनल फ़ोन के साथ ड्रोन को कनेक्ट किया जाता है जिसकी सहायता से हम ड्रोन को कब, कहां, कितनी स्पीड और कितनी ऊंचाई पर उड़ा सकते हैं। ड्रोन में एक टेलीमीटरी सिस्टम का एंटीना लगा होता है जिसके द्वारा महत्वपूर्ण जांनकारी ड्रोन के कंटोल सिस्टम में चली जाती है। इसके तीन भाग होते हैं

1. प्रपोसन सिस्टम
2. फ्लैट कंट्रोल यूनिट
3. पॉवर सिस्टम

प्रपोसन सिस्टम का उपयोगः

प्रोपेलरड्रोन को उड़ने में मदद करता है। फ्लैट कंट्रोल यूनिटः इसका उपयोग ड्रोन को कंट्रोल करने के लिए किया जाता है इसके अंदर बैरोमीटर, एक्सलोमीटर एवं पॉवर डिस्ट्रीब्यूशन बोर्ड लगा होता है जो कि मोटर को पॉवर की आपूर्ति करता है ड्रोन की चक्कर लगाने की क्षमता और उड़ने की ऊँचाई अंदर लगी मदर बोर्ड और माइक्रोचिप के द्वारा कंट्रोल की जाती है। जी पी एस सिस्टम की मदद से ड्रोन की स्थिति का

*कृषि महाविद्यालय, कोटवा, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या, उत्तरप्रदेश

आकलन किया जाता है साथ ही साथ ड्रोन को लैंड कराने में भी मददगार होता है ।

पॉवर सिस्टम

ड्रोन को पॉवर की आपूर्ति के लिए लिथियम की बैटरी लगी होती है जिसकी क्षमता सोलह हजार यम ए यच या 22.5 वोल्ट की होती है जो कि 15 से 20 मिनट तक का फ्लाइंग टाइम आसानी से पूरा कर लेता है। पॉवर कनेक्ट करने के बाद जी पी यस और पॉवर लॉक सिस्टम को चेक किया जाता है कि इसमे कोई त्रुटि तो नहीं है इसके बाद टेली मीटरी सिस्टम को कनेक्ट करते है।यह सिस्टम की क्षमता लगभग 5 गीगाहर्टज से कनेक्ट कर देते है, तत्पश्चात प्रोग्रामिंग के द्वारा लोकेशन सेट करते है ड्रोन को हम दो प्रकार से उड़ा सकते है–

1. ऑटो पायलट मोड
2. मैन्युअल मोड

आधुनिक कृषि में ड्रोन का उपयोग

कृषि प्रबंधन में ड्रोन के उपयोग की असीम संभावनाएं हैं जो निम्नलिखित हैं–

1. अत्यधिक बारिश के कारण बाढ़से ख़राब हुई फसलों, सूखा, ओलावृष्टि के कारण फसलों में हुए नुकसान का पता लगाने के लिए भी इसका उपयोग किया जाता है।
2. पौधों एवं फसल में लगी हुई बीमारियों आदि का पता लगाने में ड्रोन का प्रयोग बहुतायत हो रहा है ।
3. कृषि उपयोग में लाए जाने वाले उर्वरक, कीटनाशक आदि की मात्रा में कमी लाने में।
4. ड्रोन में लगे हुए विभिन्न प्रकार के स्मार्ट सेंसर के माध्यम से पौधों में पोषक तत्वों की स्थिति, मृदा में नमी की मात्रा आदि का पता आसानी से लगाया जा सकता है।
5. ड्रोन का प्रयोग करके किसान भाई अपनी आय को दोगुनी तक कर सकते हैं।
6. ऊँचाई वाली फसलों जैसे गन्ना, ज्वार, बाजरा, आदि पर कीटनाशकों का छिड़काव आसानी से ड्रोन की मदद से किया जा सकता है।
7. ड्रोन में लगे उच्च क्षमता वाले मल्टी स्पेक्ट्रम कैमरों की मदद से फसलों की इमेज आसानी से ली जा सकती है।
8. ड्रोन का उपयोग करके फसलों का हवाई सर्वेक्षण आसानी से किया जा सकता है।
9. ड्रोन के इस्तेमाल से देश के ग्रामीण इलाकों में बेरोजगार युवाओं के लिए नौकरियां पैदा की जा सकती हैं।
10. ड्रोन की मदद से माइक्रो और मैक्रो (न्यूट्रिएंट) उर्वरक का फसलों पर छिडकाव आसानी से किया जा सकता है ।

ड्रोन की आवश्यकता

ड्रोन की मदद से कठिन से कठिन कार्य आसानी से मजदूरों की कमी और निश्चित समय सीमा पर सुरक्षित तरीके से किया जा सकता है यह तकनीक किसानों के लिए वरदान साबित हो रही है।

ड्रोन विमान संचालन के नियम

भारत सरकार के कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय ने ड्रोन के अनुप्रयोग हेतु मानक संचालन प्रक्रिया के नियम एवं दिशा निर्देश जारी किया है जो कि ड्रोन संचालन के लिए अति आवश्यक है। ड्रोन को उड़ाने हेतु एस. ओ. पी.में निम्न पहलू शामिल हैं जैसे कि ड्रोन का पंजीकरण, उड़ान की अनुमति, वजन, भीड़–भाड़ वाले क्षेत्रों में उड़ाने का प्रतिबंध, सुरक्षा बीमा, मौसम की स्थिति, हवाई उड़ान का क्षेत्र आदि शामिल है हालांकि ड्रोन को 120 मीटर से कम ऊंचाई पर उड़ान भरने के लिए अनुमति की आवश्यकता नहीं होती है।

भविष्य में ड्रोन में तकनीकी सुधार की आवश्यकता

प्रयुक्त प्रौद्योगिकी में निरंतर सुधार की आवश्यकता।

फसलों की इमेजिंग में सुधार की आवश्यकता।

सॉफ्टवेयर संरचना में सुधार की आवश्यकता ।

कीमत में कमी की आवश्यकता।

ड्रोन उपयोग में बाधाएं

अत्यधिक मूल्य होने के कारण छोटे एवं मध्यम वर्ग के किसानो को ड्रोन को खरीदने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है जिससे यह वर्ग इसके उपयोग से वंचित हो जाते हैं।

किसानों को वैज्ञानिक प्रशिक्षण या ड्रोन के बारे में तकनीकी जानकारी ना होने से भी ड्रोन के संचालन में कठिनाई का सामना करना पड़ता है।

स्थानीय बाजारों में ड्रोन के सर्विस सेंटर ना होने के कारण तकनीकी खराबी आ जाने के कारण इसे दूर दराज के शहरों में ले जाकर ठीक करने भी कठिनाई एवं समय की भी बर्बादी होती है।

ड्रोन संचालन (उड़ाने) के लिए परमिशन की आवश्यकता का होना।

भारतीय भोजन में कम हो रही है जिंक की मात्रा, बढ़ा बीमारियों का खतरा

कंचन* एवं एस. के तोमर**

आहार से जौ, बाजरा, चना जैसे मोटे अनाजों का गायब होना, पैकेजिंग वाले आटे की जिंक सूक्ष्म पोषक तत्वों में शामिल एक प्रमुख घटक है जो मानव स्वास्थ्य के लिए बेहद जरूरी है। लेकिन, कुपोषण दूर करने के प्रयासों के बावजूद भारतीय आबादी के भोजन में जिंक की मात्रा लगातार कम हो रही है। भारतीय और अमेरिकी शोधकर्ताओं के एक नए अध्ययन में यह बात उभरकर आयी है। वर्ष 1983 में भारतीय लोगों के आहार में अपर्याप्त जिंक के सेवन की दर 7 प्रतिशत थी जो वर्ष 2021 में बढ़कर 25 प्रतिशत हो गई। इसका अर्थ है कि 1983 की तुलना में वर्ष 2021 में 8.2 करोड़ लोग जिंक की कमी का शिकार हुए हैं।जिंक के अपर्याप्त सेवन की दर चावल का ज्यादा उपभोग करने वाले दक्षिण भारतीय और पूर्वोत्तर राज्यों, जैसे–केरल, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, मणिपुर और मेघालय में अधिक देखी गई है। इसके पीछे चावल में जिंक की कम मात्रा को जिम्मेदार बताया जा रहा है। जिंक शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसीलिए, जिंक के अपर्याप्त सेवन से स्वास्थ्य पर गंभीर दुष्प्रभाव पड़ सकतेहैं। इसकी कमी से छोटे बच्चों के मलेरिया, निमोनिया और दस्त संबंधी बीमारियों से पीड़ित होने का खतरा रहता है।जिंक उपभोग में यह गिरावट अस्सी के दशक से कुपोषण समाप्त करने के प्रयासों के बावजूद देखी गई है जो चिंताजनक है। इन प्रयासों में बच्चों में कुपोषण और एनिमिया की रोकथाम और बच्चों तथा माताओं में विटामिन–ए की कमी की दर को नियंत्रित करना शामिल है।

शोधकर्ताओं ने भारतीय आहार पैटर्न पर आधारित विस्तृत सर्वेक्षण आंकड़ों का उपयोग किया है ताकि यह अनुमान लगाया जा सके कि बदलते वातावरण में अपर्याप्त जिंक सेवन की दर कैसे बदल सकती है। भोजन में जिंक की मात्रा कम होने का कारण भारतीय लोगों के आहार से जौ, बाजरा, चना जैसे मोटे अनाजों का गायब होना भी जिम्मेदार है। इसके अलावा, पैकेजिंग में मिलने वाले चोकर रहित आटे का उपयोग भी जिंक के अपर्याप्त सेवन से जुड़ा एक प्रमुख कारक है।

यह अध्ययन इंडियन इंस्टीट्यूट ऑप पब्लिक हेल्थ, नई दिल्ली, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ बिजनेस, हैदराबाद और अमेरिका के कोलंबिया विश्वविद्यात्रय एवं हार्वईटीएच चैन स्कूल ऑफ पब्लिक हेल्थ के शोधकर्ताओं ने मिलकर किया है। अध्ययन शोध पत्रिका फूड ऐंड न्यूट्रिशन बुलेटिन में प्रकाशित किया गया है।

शोधकर्ताओं का कहना है कि अत्यधिक मात्रा में कार्बन उत्सर्जन और ग्लोबल वार्मिंग फसलों में जिंक की मात्रा को प्रभावित कर सकती है। कार्बन डाइऑक्साइड का लगातार बढ़ता स्तर कुछ दशकों में 550 पीपीएम तक पहुंच सकता है, जिससे फसलों में जिंक की कमी हो सकती है। इसके साथ ही, खाद्य पदार्थों से कई महत्वपूर्ण पोषक तत्व और रेशे गायब हो सकते हैं।

कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के एसोसिएट प्रोफेसर स्टीवन डेविस, जो इस अध्ययन में शामिल नहीं थे, ने हाल में अपने अध्ययन में पाया है कि जीवाश्म ईंधन का दहन और कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन ऐसे ही जारी रहा तो मानव जनित ग्लोबल वार्मिंग से पैदा पोषण सूखे और गर्मी के कारण जौ की फसल की पैदावार में तेजी से गिरावट हो सकती है।

इस शोध में यह भी रेखांकित किया गया है कि प्रजनन क्षमता में कमी के चलते भारत में जनसांख्यिकी बदलाव होने से बच्चों की अपेक्षा वयस्कों का अनुपात बढ़ा है। वयस्कों की जनसंख्या बढ़ने से औसत

*एस0 एम0एस0 (गृह विज्ञान) के.वी.के बेलीपार, गोरखपुर, **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, के.वी.के बेलीपार, गोरखपुर, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या, उत्तरप्रदेश

भारतीय के लिए जिंक की आवश्यकता पांच प्रतिशत बढ़ गई है क्योंकि वयस्कों को बच्चों की तुलना में अधिक जिंक की आवश्यकता होती है ।इस अध्ययन से जुड़े शोधकर्ता स्मिथ एम.आर.के मुताबिक "भारत पोषण और स्वास्थ्य के क्षेत्र में व्यापक सुधार की दिशा में निरंतरप्रयास कर रहा है। लेकिन, भोजन में जिंक की मात्रा बढ़ाने की तरफ ध्यान देना पहले से ज्यादा जरूरी हो गया है।""इस अध्ययन में स्मिथ एम.आर. के अलावा कोलंबिया विश्वविद्यालय के शोधकर्ता रूथ हेफ्रीज, इंडियन स्कूल ऑफ बिजनेस के अश्विनी छत्रे और इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ पब्लिक हेल्थ के मेयर्स एस.एस. शामिल्र हैं। (इंडिया साइंस वायर)

जिंक के फायदे और नुकसान।

जिंक का मतलब जिंक प्रकृति में पाया जाने वाल्रा एक ऐसा खनिज है जो मनुष्य के लिए लाभकारी होता है। यह शरीर के लिए एक आवश्यक पोषक तत्व माना जाता है क्योंकि यह शरीर को कोशिकाओं के अंदर जीन, डीएनए और प्रोटीन बनाने और प्रतिरक्षा कार्य करने जैसी कई प्रक्रियाओं को करने में मदद करता है। शरीर स्वाभाविक रूप से जस्ता का उत्पादन नहीं करता है और कभी–कभी, जिंक की गंभीर कमी मानव शरीर पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकती है। इसलिए चिकित्सक द्वारा लोगों को जिंक युक्त स्वास्थ्य पूरक लेने की सलाह दी जाती है। हालांकि, विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों के माध्यम से जस्ता की पूर्ति आसानी से की जा सकती है। जिंक के अच्छे खाद्य स्रोतों और

जिंक की भूमिका

जिंक क्या है?

जिंक एक ऐसा खनिज है जो हमारी सभी कोशिकाओं में पाया जाता है और यह हमें स्वस्थ रहने में मदद करता है। मानव शरीर को विभिन्न प्रक्रियाओं जैसे प्रतिरक्षा कार्य, प्रोटीन के संश्लेषण, डीएनए के संश्लेषण, जीन अभिव्यक्ति और घावों के उपचार के लिए जस्ता की आवश्यकता होती है।

गर्भवती महिलाओं और बच्चों को विशेष रूप से शरीर के उचित उन्नति व विकास के लिए जिंक की आवश्यकता होती है।

जिंक के स्वास्थ्य लाभ क्या हैं?

मानव शरीर को मजबूत बनाने के लिए जिंक बहुत फायदेमंद होता है। यह प्रतिरक्षा को बढ़ाने और संक्रमण से लड़ने और कैंसर कोशिकाओं को नष्ट करने में मदद करता है। यदि शरीर में जिंक की गंभीर कमी हो जाती है, तो प्रतिरक्षा प्रणाली कमजोर हो जाती है। इसलिए अपने आहार में जिंक को शामिल करना जरूरी है ।जिंक मलेरिया और अन्य परजीवियों के कारण होने वाली बीमारियों से बचाव करने में मदद करता है।

शोध के अनुसार मोतियाबिंद और रतौंधी जैसी नेत्र संबंधी समस्याओं के लिए भी जिंक फायदेमंद होता है। जिंक अस्थमा, उच्च रक्तचाप के इलाज में कारगर होता है।

बच्चों में दस्त का इलाज जिंक की गोलियों से किया जा सकता है ।मुंहासों की समस्या को दूर करने में जिंक मुख्य भूमिका निभाता है। इसलिए अपनी त्वचा की स्थिति में सुधार के लिए अपने आहार में जिंक युक्त खादय पदार्थों को शामिल करें। जिंक सल्फेट को मुंहासों और पिंपल्स के लिए एक कारगर इलाज माना जाता है।

सर्दी–जुकाम

जुकाम जैसी सामान्य समस्याओं के लिए जिंक कारगर साबित होता है।

कौन से खाद्य पदार्थ जिंक प्रदान करते हैं?

जिंक विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों में पाया जाता है जो जिंक की जरुरी दैनिक आवश्यकता प्रदान कर सकते हैं।

मांसाहारी लोगों के लिए, मांस (लाल मांस), मुर्गी, समुद्री भजन जैसे सीप, केकड़ा और झाँगा मछली जैसी चीजें आदि है।

शाकाहारियों के लिए, साबूत अनाज, गढ़ वाले नाश्ता अनाज, नट और डेयरी उत्पाद जैसे आइटम। शाकाहारियों द्वारा खाए गए कुछ बीन्स और अनाज में ऐसे यौगिक होते हैं जो को जिंक शरीर द्वारा अवशोषित होने से रोकते हैं। इसलिए, राष्ट्रीय स्वास्थ्य

(शेष पृष्ठ 21 पर)

गर्भावस्था में समस्यायें आयें तो महिलायें क्या करें

सरिता श्रीवास्तव*, सुमन प्रसाद मौर्या** एवं प्राची शुक्ला***

गर्भावस्था किसी भी स्त्री के जीवनकाल की एक सुखमय अवस्था है, क्योंकि मां बनना हर–स्त्री का अधिकार है। गभावस्था में स्त्री को अनकों शारीरिक परिवर्तनों से गुजरना पड़ता है। इन शारीरिक परिवर्तनों के कारण प्रत्येक स्त्री को कुछ सामान्य समस्याओं का सामना करना पड़ता है। ये सामान्य समस्यायें हैं इनसे घबराना नहीं चाहिये तथा स्वंय को घरेलू तथा अन्य कार्यों में व्यस्त रखना चाहिये तथा तनाव रहित व प्रसन्न रहने का प्रयास करना चाहिये। ये समस्यायें शरीरिक परिवर्तनों के कारण होती हैं जो समय के साथ ठीक हो जाती हैं।

1. सुबह के समय जी मचलाना तथा उल्टी आना

गर्भावस्था के प्रारम्भिक तीन माह में प्रायः: सुबह–सुबह महिलाओं का जी मचलाता है व कभी–कभी उल्टी भी आती है। ये एक सामान्य समस्या है। इस समस्या को कम करने के लिए गर्भवती महिला को सुबह चाय के साथ बिस्कुट या ब्रेड लेना चाहिये खाली चाय नहीं पीनी चाहिए। भोजन को थोड़ा–थोड़ा कई बार में खाना चाहिए। पानी भरपूर पीते रहना चाहिये। बिना डाक्टर की सलाह के कोई दवा नहीं लेनी चाहिये। यदि उल्टियां गर्भावस्था में 3–4 माह के बाद तक आती रहती है तो डाक्टर को दिखाना चाहिये।

2. बार–बार पेशाब आना–

ये एक सामान्य समस्या है। ऐसी परिस्थिति में घबराना नहीं चाहिये, पेशाब में कठिनाई या जलन हो तो पानी अधिक पिये। समस्या अधिक हो तो डाक्टर की सलाह लें।

3. कब्ज–

गर्भावस्था में यदि बार–बार कब्ज की समस्या बनी रहती है तो पर्याप्त मात्रा में पानी पियें। फल, हरी सब्जी सलाद, अंकुरित दालों, फलों का रस तथा दूध आदि की मात्रा भोजन में बढ़ा दें।

4. सीने में जलन–

गर्भावस्था में पाचन क्रिया शिथिल पड़ने के कारण प्रायः सीने में जलन की शिकायत रहती है इसलिए अधिक तेल मसाले वाला भोजन न करें, भोजन को कई बार मेंथोड़ा–थोड़ा खायें। रात्रि का भोजन सोने से 4–2 घण्टे पूर्व कर लें। पेय पदार्थों जैसे दूध, फल, जूस इत्यादि की मात्रा बढ़ा दें।

5. भोजन में अरूचि–

कभी–कभी गर्भवती महिला को किसी विशेष भोज्य पदार्थ की महक या खाने से अरूचि हो जाती है, इसलिए भोजन में विविधता लायें। यदि मिटटी, चूना, सीमेन्ट आदि चीजें खानें का मन करे या आदत पड़ जाये तो उसे तुरत्त छोड़ दें। ये नुकसानदायक हो सकता है। इसके स्थान पर सौंफ, इलाइची आदि खा सकती है। ये समस्या प्रायः 3 माह पश्चात समाप्त हो जाती है।

6. हाथ पैरों में सूजन–

यदि आपके हाथ पैरों में सूजन आ जाती है तो अधिक देर तक खड़े न रहें पैर लटका कर न बैठें। पौष्टिक भोजन लें। सूजन बढ़ जाय या अधिक समय तक रहे तो तुरन्त डाक्टर की सलाह लें।

7. बवासीर–

यदि गर्भवती महिला को कब्ज की समस्या लगातार रहती है तो बवासीर होने का खतरा बढ़ जाता है। बवासीर होने पर भोजन में रेशेदार भोज्य पदार्थों जैसे अंकुरित दालें, सलाद, फल आदि तथा पेय पदार्थों की मात्रा बढ़ा दें। डाक्टर की सलाह पर बाजार में उपलब्ध लगाने वाली दवाईयों (कीम / लोशन) का प्रयोग करें।

नींद में कमी–

गर्भवती स्त्रियों को कभी–कभी नींद न आने की समस्या होती है। उन्हें सोने के कमरे को साफ व बिस्तर को आरामदायक बनाना चाहिये। सोने से पूर्व मौसम के अनुसार गर्म / ठण्डे पानी से स्नान करना भी ऐसी परिस्थिति में लाभकारी होता है। याद रहे नींद न आने पर कभी नींद की गोली न खायें।

*मानव विकास एवं परिवार अध्ययन विमाग, सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या, उत्तरप्रदेश

त्वचा सम्बन्धी समस्यायें–

त्वचा में खुजली होना गर्भावस्था की एक आम समस्या है। त्वचा को खुजलायें नहीं।डाक्टर की सलाह पर कोई क्रीम लेकर प्रयोग करें। ढीले व सूती बस्त्र पहनें। क्रीम, लोशन तथा पाउडर लगाना लाभदायक साबित हो सकता है।

उपरोक्त समस्याओं के अतिरिक्त, सिर, बदन, पैर, पेट अथवा पीठ में दर्द होना भी सामान्य समस्या है जिन्हें भरपूर आराम व पौष्टिक भोजन लेकर दूर किया जा सकता है।

तकलीफ अधिक बढ़ने पर डाक्टर की सलाह लें। गर्भावस्था की सामान्य समस्याओं से किसी प्रकार का खतरा होने की कोई सम्भावना नहीं रहती, किन्तु कभी–कभी गर्भावस्था में कुछ गम्भीर शारीरिक समस्यायें आ जाती हैं, जिससे माता व गर्भस्य शिशु दोनों की जान का खतरा हो सकता है। इन समस्याओं का लक्षण दिखते ही तुरन्त डाक्टर से सर्म्पक करना अत्यन्त आवश्यक है।

ये खतरनाक लक्षण इस प्रकार हैं–

लगातार उल्टियां होना।

चेहरे व पैरों में अत्यधिक सूजन।

बुखार जो बिना सर्दी जुकाम के लगातार बना रहे।

लगातार/अक्सर तीव्र सिर दर्द।

मूत्र त्याग करते समय जलन या असुविधा होना।

रक्तचाप का अचानक बढ़ना, चक्कर आना, बेहोशी के झटके आना।

योनि मार्ग से स्राव या रक्त आना।

किसी दुर्घटना या गर्भवती स्त्री के गिर जाने पर या अन्य किसी कारणवश गर्भस्थ शिशु की गति रूक जाना।

किसी गम्भीर बीमारी (टीबी, रूबैला, पीलिया आदि) का संक्रमण होने पर।

उपरोक्त में से कोई भी लक्षण दिखने पर तत्काल डाक्टर से सम्पर्क करना चाहिये।

यदि आप गांव में रहती हैं तथा तत्काल डाक्टर से सम्पर्क करना सम्भव नहीं है तो किसी भी परेशानी होने पर अपने गांव की आशा बहू से सम्पर्क करना चाहिये। यदि आप इस प्रकार अपना ध्यान रखेगी व समय–समय पर डाक्टर के द्वारा अपना निरीक्षण कराती रहेगी तो आपका सम्पूर्ण गर्भकाल सुरक्षित रहेगा व आप एक स्वस्थ बच्चे की माता बनेगी।

(पृष्ठ 19 का शेष)

संस्थान (एनआईएच) के अनुसार शाकाहारियों को अनुशंसित मात्रा से 50 अधिक जस्ता खाने की जरूरत है।

जिंक का अनुशंसित सेवन क्या है?

नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ हेल्थ (एनआईएच)। प्रत्येक दिन मिलीग्राम (मिलीग्राम) में जस्ता के मुताबिक, आपकी उम्र के आधार पर की मात्रा की सिफारिश की जाती है।

जीवनस्तर	अनुशंसितराशि
जनन्मसे 6 महीने	2 मिलीग्राम
शिशु 7 72 महीने	3 मिलीग्राम
शिशु :3 साल	3 मिलीग्राम
बच्चे 4–8 साल	5 मिलीग्राम
बच्चे 9– 3 साल	8 मिलीग्राम
किशोर 14–18 साल (लड़के)	11 मिलीग्राम
किशोर14 – 18 साल (लड़कियां)	9 मिलीग्राम
वयस्क (पुरुष)	11 मिलीग्राम
वयस्क (महिला)	8 मिलीग्राम
गर्भवती किशोरी	12 मिलीग्राम
गर्मवती महिलाएं	11 मिलीग्राम
स्तनपान कराने वाले किशोरी	13 मिलीग्राम
स्तनपान कराने वाली महिलाएं	12 मिलीग्राम

जस्ता स्वास्थ्य की खुराक का कोई भी सेवन केवल पंजीकृत आहार विशेषज्ञ या सामान्य चिकित्सक की सलाह के अनुसार होना चाहिए।

मछली पालन प्रबंधन

डॉ. सी. पी. सिंह* एवं डॉ. ओ पी वर्मा**

मछली पालन एक ऐसा व्यवसाय है जिसमें एक बेरोजगार युवक अपने साथ–साथ अन्य 5–6 बेरोजगार युवको को रोजगार मुहैया करा सकता है। स्वस्थ एवं अधिक उत्पादन में उचित प्रबंधन का योगदान अतिमहत्वपूर्ण होता है। उचित प्रबंधन के माध्यम से मछली पालन के दौरान उत्पादन में वृद्धि के साथ–साथ मछलियो में

बीमारियों का संक्रमण

प्राकृतिक एवं परिपूरक आहार पर व्यय

जलीय गुणवत्ता आदि पर कुल लागत को कम किया सकता है।

अतः मछली पालन के दौरान किये जाने वाले प्रबंधन को दो घटको में विभाजित किया जा सकता है

1. बीज संचय पूर्व प्रबंधन
2. बीज संचयोपरान्त प्रबंधन

बीज संचय पूर्व प्रबंधन

तालाब की मरम्मत एवं सफाई

मत्स्य बीज संचयपूर्व तालाब में जल निवेशिका द्वार एवं निर्गमद्वार की व्यवस्था उचित तरीके से कर लेनी चाहिए यदि तालाब कही से टूटा–फूटा हो तो उसकी मरम्मत भली प्रकार से करना अति आवश्यक होता है और यह कार्य माह अप्रैल–मई में कर लेना चाहिए ताकि माह जुलाई में बीज उपलब्ध होने पर समय से बीज संचय किया जा सके।

तालाब की सफाई

तालाब में अवांछित एवं परभक्षी मछलियों का नियन्त्रण

वैज्ञानिक पद्धति से मत्स्य पालन करने के लिए मत्स्य पालकों को तालाब में मौजूद अनावश्यक एवं परभक्षी मछलियों का नियन्त्रण करना अति आवश्यक है जिससे पाली जाने वाली मछलियों को आवश्यक अनुकूल वातावरण एवं भोज्य पदार्थ पर्याप्त मात्रा में मिल सकें तथा मत्स्य पालकों को अधिक उत्पादन प्राप्त हो सके।

अनावश्यक मछलियां

ये बहुत छोटी मछलियॉ होती हैं जो तालाब में पाली जाने वाली मछलियों के आहार को ग्रहण कर उनकी वृद्धि को प्रभावित करती हैं। ये तालाब का अधिकतर प्राकृतिक आहार स्वयं खा जाती हैं तथा पर्याप्त मात्रा में तालाब का स्थान घेरती हैं। ये मछलियाँ साल में कई बार प्रजनन कर सकती हैं अतः इनकी संख्या बहुत तेजी से बढ़ती है। जिससे अन्य शिकारी जीव–जन्तु तालाब की ओर आकर्षित होकर आ जाते हैं जो पाली जाने वाली मछलियों को भी नुकसान पहॅुचाते हैं। ये मछलियाँ तालाब के जल में घुलित आक्सीजन का उपयोग कर पाली जाने वाली मछलियों के लिए आक्सीजन की कमी का संकट भी पैदा करती हैं। कुछ अनावश्यक मछलियॉ जैसे – धवई, भोला, चनरी, डेंडुआ, सिधरी, कौआ आदि सामान्यतः तालाब में पायी जाती हैं।

परभक्षी या शिकारी मछलियां

ये मछलियॉ मांसाहारी होती हैं ये पाली जाने वाली मछलियों से अधिक ताकतवर व फुर्तीली होती हैं अतः ये पालतू मछलियों का आसानी से शिकार कर लेती हैं। इनका मुख्य आहार पाली जाने वाली मछलियॉ, अनावश्यक मछलियॉ एवं तालाब में मौजूद अन्य जीव–जन्तु होते हैं परन्तु ये मछलियॉ प्राकृतिक आहार एवं कृत्रिम आहार का भी अपहरण कर लेती हैं। ये

*सह–प्राध्यापक, मात्स्यिकी महाविद्यालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या, उत्तरप्रदेश

**वरिष्ठ वैज्ञाानिक, कृषि विज्ञान केन्द्र, सिद्धार्थ नगर (उ.प्र.)

मछलियॉ भी तालाब में स्थान घेरती हैं एवं जल में घुलित आक्सीजन की कमी का संकट पैदा करती हैं। कुछ प्रमुख परभक्षी मछलियॉ गिरई, सौर, मांगुर, सिंघी, टेंगन, पतरा, मोय, कवई, बाम आदि नदी—नालों के माध्यम से तालाब में आ जाती हैं।

उपरोक्त अनावश्यक एवं परभक्षी मछलियों को तालाब में आने से रोकने के लिये मत्स्य पालकों को तालाब के चारों ओर जल की सतह से लगभग 0.5 मीटर ऊँचा बन्धा बनाना चाहिए तथा प्राकृतिक स्रोत से आने वाले जल के रास्ते पर पहले बड़े फन्दे की तथा फिर छोटे फन्दे की जाली लगा देनी चाहिए ताकि जल के साथ आने वाली अवान्छनीय एवं परभक्षी मछलियों तथा कीड़ों को तालाब में आने से रोका जा सके।

निकासन विधियां

तालाब में मत्स्य पालन प्रारम्भ करने से पहले मत्स्य पालकों को अनावश्यक एवं परभक्षी मछलियों को तालाब से अवश्य निकाल देना चाहिए अन्यथा मत्स्य उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। बड़े जल क्षेत्रों से इन मछलियों का निकालना एक कठिन कार्य है परन्तु नर्सरी व संचय तालाब से इनको निम्न विधियों से निकाला जा सकता हैं :—

1—जाल द्वारा

बारीक फंदों वाले जाल को तालाब में बार—बार चलाकर अवांछनीय एवं परभक्षी मछलियों को निकाला जाता है। इस विधि से इन मछलियों को पूर्ण रुप से निकालना सम्भव नहीं हो पाता है क्योंकि ये मछलियॉ बहुत तेज एवं चालाक होती हैं। जो जाल के घेरे से बचकर तालाब की तली एवं कोनों में छिप जाती हैं।

2—जल निकासी द्वारा

छोटे तथा मध्यम आकार के तालाबों का पानी पम्प द्वारा निकालकर अनावश्यक एवं परभक्षी मछलियों को पूर्ण रुप से तालाब से निकाला जा सकता है। कुछ तालाबों में पानी निकालने का प्राविधान तालाब निमार्ण के समय किया जा सकता है। इस विधि से मछलियों को निकालने के बाद तालाब को सूखने के लिए छोड़ देना चाहिए जिससे तालाब में मौजूद अन्य परजीवी नष्ट हो जाते हैं। इस विधि द्वारा मछलियों का उन्मूलन गर्मी के दिनों में करने पर अधिक लाभदायक होता है क्योंकि गर्मियों के दिनों में तालाब का जलस्तर बहुत जल्दी नीचे चला जाता है।

3—विष का प्रयोग करके

विश का प्रयोग करके किसी भी आकार—प्रकार के तालाब से इन मछलियों को पूर्ण रुप से निकालना सम्भव है। विश के प्रयोग से तालाब में मौजूद अन्य जीव—जन्तु तथा वनस्पति एवं जन्तु प्लवक भी नश्ट हो जाते हैं तथा यह पशुओं एवं मनुश्यों के लिए भी हानिकारक हो सकता है अतः इसका प्रयोग सोच समझकर पूरी सावधानी के साथ करना चाहिए। अनावश्यक एवं परभक्षी/मांसभक्षी मछलियों को तालाब से नष्ट करने हेतु प्रयोग किए जाने वाले मुख्य विष निम्न प्रकार से हैं :—

महुआ की खली

महुआ की खली का प्रयोग परभक्षी एवं अनावश्यक मछलियों को मारने के लिए सबसे अच्छा रहता है क्योंकि इसके प्रयोग से मरी मछलियों को बाजार में खाने के लिए बेचा जा सकता है तथा महुआ की खली तालाब में खाद का काम भी करती है। इसका प्रयोग 2000—2500 किग्रा0/हे0/मीटर की दर से किया जाता है। खली को प्रयोग करने से एक दिन पूर्व पानी में भिगो दिया जाता है तथा अगले दिन इसका छिड़काव पूरे तालाब में करके पानी को हिला दिया जाता है। 6—10 घण्टे के अन्दर मछलियाँ विष के प्रभाव से बेहोश होकर सतह पर आ जाती हैं जिन्हें जाल चलाकर निकाल लिया जाता है। पानी में विष का प्रभाव 15—20 दिनों तक रहता है बाद में खली तालाब में जैविक खाद का काम करती है। अतः तालाब में गोबर की खाद की पहली किश्त डालने की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

ब्लीचिंग पाउडर

ब्लीचिंग पाउडर 200–250 किग्रा प्रति हेक्टेयर प्रति मीटर पानी की दर से घोल बना कर तालाब में छिड़काव करने से 3–4 घण्टे के अन्दर मछलियॉ मर जाती हैं। ब्लीचिंग पाउडर के प्रयोग से एक दिन पूर्व 50 किग्रा0 यूरिया/हेक्टेयर/मीटर की दर से छिड़काव करने पर ब्लीचिंग पाउडर का प्रभाव बढ़ जाता है। इसका तालाब में विषैला प्रभाव 7–8 दिन तक बना रहता है।

क्रोटन टिगलियम बीज चूर्ण

क्रोटन टिगलियम नामक पौधे के बीजों एवं फलों से यह चूर्ण बनाया जाता है। इस चूर्ण का प्रयोग 30–50 किग्रा/हेक्टेयर/मीटर की दर से करने पर मछलियॉ मर जाती हैं। पानी में जहर का प्रभाव लगभग 5–7 दिनों तक बना रहता है।

डेरिस रुट चूर्ण

यह चूर्ण डेरिस नामक पौधे की जड़ों को पीसकर बनाया जाता है। इसमें 5 प्रतिशत रोटीनोन होता है जो मछलियों की श्वसन क्रिया में रुकावट डालता है जिससे मछलियाँ मर जाती हैं। यह चूर्ण 60–100 किग्रा0/हे0/मीटर की दर से प्रयोग किया जाता है। इसके विष का जल में 7–8 दिन तक प्रभाव बना रहता है। उपरोक्त विधियों के अलावा आजकल बाजार में कुछ घातक जहरीले रसायन क्लोरीनयुक्त हाइड्रोकार्बन एवं आर्गेनोफास्फेट कृषि में प्रयोग हेतु उपलब्ध होते हैं जिनका प्रयोग कुछ लोग मछलियों को मारने के लिए करते हैं। इन रसायनों का पानी में लम्बे समय तक प्रभाव बना रहता है अतः इन रासायनिक विषों का प्रयोग नही करना चाहिए।

बीज संचय हेतु तैयारी

मत्स्य तालाब में मछलियों की संतोषजनक वृद्धि हेतु 1.25–1.50 मी0 जल स्तर वर्षभर बनाये रखना चाहिए। तालाब में प्राकृतिक आहार एवं जल की उत्पादकता बनाये रखने के लिए चूना, उर्वरक एवं गोबर की खाद का प्रयोग अति आवश्यक है। इनके नियमित अन्तराल पर प्रयोग से गुणवत्ता, एवं प्राकृतिक आहार की उपलब्धता बराबर बनी रहती है। चूना 2.0–2.5कु0/है0, कच्ची गोबर 20– 25 कु0/है0 प्रथम बार में तालाब में डाला जाना चाहिए, जिसमें गोबर को चूना प्रयोग के 24 घंटे बाद ही तालाब में डालना उचित होता है। चूना एवं गोबर की खाद के प्रयोग के 10–15 दिन के अंदर पानी का रंग हरा–भूरा हो जाता है जो प्राकृतिक आहार की उपलब्धता को दर्शाता है। अतः उस समय तालाब पूरी तरह बीज संचय के लिए उपयुक्त होता है।

तालाब में बीज संचय का कार्य अति महत्वपूर्ण है जो वार्षिक प्रबंधन एवं आय–व्यय को प्रभावित करता है। अतः सही प्रजाति एवं संचय संख्या हेतू निम्न बातो का ध्यान रखना चाहिए

मछली की वृद्धि दर

स्थानीय स्तर पर उपलब्ध भोजन एवं अवयवों की ग्ग्रह्यता

समाजिक स्वीकार्यता

भोजन रुपान्तरण दर

स्वादिष्टता

मत्स्य बीज संचय

बीज संचय के लिहाज से वैज्ञानिक स्तर पर छः प्रजातियों को मछली पालन हेतु उपयुक्त माना जाता

(पूरक आहार प्रतिदिन किग्रा0 में)

माह	3 प्रजाति	4 प्रजाति	6 प्रजाति
प्रथम तीन माह	2	2.5	3
द्वितीय तीन माह	4	5.0	6
तृतीय तीन माह	6	7.5	9
चतुर्थ तीन माह	8	10.0	12
कुल पूरक आहार प्रतिवर्ष	1000′	2000′	2200′

है जिसमें तीन प्रजाति स्वदेशी तथा तीन प्रजाति विदेशी मूल की हैं तथा ये प्रजातिया अशन एवं भोजन स्वभाव में एक–दूसरे से भिन्न होती हैं और एक दूसरे से कोई प्रतियोगिता भी नही करती हैं। ये प्रजातिया है

(अ) भारतीय मेजर कार्प

- कतला
- रोहू
- नैन(मृगल)

(ब) विदेशी कार्प

- सिल्वर कार्प
- ग्रास कार्प
- कामन कार्प

एक हैक्टेयर जल क्षेत्र हेतु लगभग 10–12 हजार अंगुलिकायें पर्याप्त होती हैं जिसमें कतला एवं सिल्वर कार्प (40 प्रतिशत), रोहू एवं ग्रास कार्प (30 प्रतिशत) तथा मृगल एवं कामन कार्प (30 प्रतिशत) के हिसाब से रखा जाता है।

संचयोपरान्त प्रबंधन

संचय उपरांत तालाब में नियमित रुप से परिपूरक आहार(सरसों की खली एवं चावल की पालिश बराबर–बराबर मात्रा में मिलाकर) 3–5 प्रतिशत शरीर भार के हिसाब से अथवा तालिका अनुसार वर्षभर आपूर्ति करनी चाहिए ताकि वृद्वि उचित प्रकार से होती रहे।

जल की गुणवत्ता बनाये रखने के लिये मध्यम गुणवत्ता वाली मृदा में बुझा चूना 2.0–2.5 कु0/है0 की दर से मासिक अन्तराल पर प्रयोग करना हितकर होता है। जल की उत्पादकता स्तर स्थायित्व हेतु रासायनिक उर्वरक यूरिया 25–30 कि0/है0, सिंगल सुपर फास्फेट 20–25 कि0/है0 तथा पोटाश 10–12 कि0/है0 की दर से तालाब में प्रयोग करना चाहिए। कच्ची गोबर 1.00–2.00 टन(10–20 कु0)/है0 समय–समय पर स्वास्थ्य वृद्धि दर जाँच हेतु तालाब में जाल चलवाकर निरीक्षण करते रहना चाहिए इस प्रकार वर्षभर प्रबंधन करने से एक हेक्टेयर तालाब से लगभग 5–6 टन (50–60 कु0)/है0 मछली उत्पादन लिया जा सकता है जिसमें लगभग रु 3–3.5 लाख शुद्ध आय के रुप में प्राप्त किये जा सकते है।

मत्स्य आखेट

जब तालाब में मछलियां एक किग्रा के आसपास वजन प्राप्त कर लें उस समय आखेट किया जा सकता है क्योंकि एक किग्रा से कम वजन की मछलियों का बाजार में उचित मूल्य नही मिल पाता है अतः टेबिल साईज की मछलियों का ही आखेट करना उचित एवं लाभप्रद होता है।

अमूल्य सुझाव

- ऊसर व बंजर भूमि का उपचार कर कृषि योग्य बनाकर खेती के प्रयोग में लाएं।
- सिंचाई जल उपयोग में बृद्धि हेतु ड्रिप एवं स्प्रिकलर पद्धति पर बढ़ावा देना तथा इसके प्रयोग पर प्रशिक्षण प्रदान कर इसे बढाने तथा क्रान्तिक अवस्थाओं पर उचित मात्रा में सिंचाई करें।
- कृषि लागत में कमी हेतु कृषि यन्त्रीकरण का प्रयोग कर जीरो टिलेज, सीडड्रिल व कम्बाइन हार्वेस्टर के साथ भूसा बनाने वाली मशीन के प्रयोग पर बल दिया जाय।
- मृदा स्वास्थ्य बढ़ानें के लिए जैविक उर्वरक, कार्बनिक खाद, फसल अवशेषों का प्रबन्ध व मृदा स्वास्थ्य कार्ड के अनुसार उर्वरकों के संतुलित प्रयोग पर बल दिया जाना जिससे उत्पादन बढानें के साथ लागत में कमी लावे।

बैकयार्ड मुर्गी पालन ग्रामीण अर्थव्यवस्था सुदृढ़ करनें में सहायक

डॉ विद्या सागर* एवं डॉ राम जीत**

भारत देश के निवासियों का जीवन स्तर शहरों में रहने वालों की तुलना में अपेक्षाकृत समृद्ध नहीं है। विगत वर्षों मे भारत सरकार ने कुक्कुट पालन को ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सुधारने का एक उत्तम साधन मानते हुए इसके विकास हेतु अनेक प्रयास किये है। आज भुर्गीपालन एक दृढ़ उद्योग का रूप ले चुका है। वैज्ञानिकों द्वारा किये जा रहे अनुसंधानों से विकसित नवीनतम प्रौद्योगिकी को अपनाने से मुर्गीपालन के क्षेत्र में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त हुई है। व्यवसायिक प्रजातियों के विकास से प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति अण्डों एवं मॉस की उपलब्धता 964 में 7 अण्डे व 88 ग्राम से बढ़कर वर्तमान में लगभग 45 अण्डे व 1000 ग्राम अनुमानित है। यद्यपि इसमें वास्तविक वृद्धि हुई है पर ग्रामीण लोगों को इसकी उपलब्धता कम व अत्यन्त उच्च कीमतों पर होती है। भारत में कुपोषण एवं गरीबी की समस्या को दूर करने के लिए पारम्परिक मुर्गी पालन अथवा घर के पिछवाड़े मुर्गी पालन की यह पद्धति प्राचीन काल से प्रचलित है। इसमें प्रायः 40–50 मुर्गियों का छोटा सा समूह एक परिवार के द्वारा पाला जाता है, जो घर एवं उसके आस–पास में अनाज के गिरे दाने, झाड़–फूसों के बीच कीडे–मकोड़े, घास की कोमल पत्तियों तथा घर या होटल,/ढाबे की जूठन आदि खाकर अपना पेट भरती है। केवल प्रतिकूल परिस्थितियों में निम्न कोटि का थोड़ा सा अनाज खिलाने की आवश्यकता होती है। इसके रात्रि विश्राम के लिए घर के टूटे–फूटे भाग व खंडहर काम में लाये जाते है। इस प्रकार घर के रख–रखाव एवं खाने–पीने पर कोई खास खर्च नही आता है। साथ ही ग्रामीण परिवारों के लिए उच्च गुणवत्ता का प्रोटीन स्रोत उपलबध हो जाता है एवं कुछ मात्रा में मांस व अण्डा बेच लेने से परिवार को अतिरिक्त आमदनी हो जाती है।

नस्ल का चुनावः वास्तव में पारम्परिक कुक्कूट पालन की भारत में अधिक प्रांसगिकता है। घर के पिछवाड़े मुर्गी पालन पद्धति के लिए उपलब्ध प्रजातियों में वनराजा, गिरिराज, असील, ग्रामप्रिया, कृष्णाजे, करकनाथ, .नन्दनम, ग्रामलक्ष्मी प्रमुख है। देशी प्रजाति के पक्षियों की वृद्धि दर व उत्पादन कम होने की वजह से इनकी लोकप्रियता घटती गई। हाल ही में केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान इज्जतनगर, बरेली में देशी और उन्नत नस्ल की विदेशी प्रजाति की मुर्गियों को मिलाकर कुछ संकर प्रजातियों विकसित की गई है इनमें कैरी श्यामा, कैरी निर्भीक, कैरी देवेन्द्रा, हितकारी एवं उपकारी प्रमुख है। ये प्रजातियां भारत के वातावरण एवं परिस्थितियों में अच्छा उत्पादन देने में सक्षम साबित हुई है और इनकी वार्षिक उत्पादन क्षमता लगभग 480–200 अंडे की है। आहार व्यवस्थाः अच्छा उत्पादन एवं अधिक लाभ प्राप्त करने के लिये कुक्कुट पालकों को मुर्गियों के आहार पर ध्यान देना चाहिए। प्रायः देखा गया है कि किसी विशेष मौसम में उत्पादित होने वाला एक विशेष प्रकार का अनाज ही मुर्गियों को खिलाया जाता है, जिससे पक्षियों को आवश्यक पोषक तत्व उचित मात्रा में प्राप्त नही होते है। अतः पक्षियों को वर्ष के दौरान पैदा होने वाले अनाजों को मिश्रित करके खिलाना चाहिए द्ययदि सम्भव हो तो सम्पूर्ण आहार के रूप में उन्हें प्रोटीन, खनिज लवण व विटामिन भी देना चाहिए। सम्पूर्ण आहार की मात्रा क्षेत्रीय उपलब्धता के आधार पर घटाई या बढ़ाई जा सकती है। आती है तथा बच्चों की मृत्यु दर बढ़ती है। अतः इन्हें प्रतिवर्ष बदल देना चाहिए। इससे अण्डा उत्पादन व प्रजनन क्षमता में प्रजनन

---

*सह प्राध्यापक/वि.व.वि. (पशु विज्ञान) एवं **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, पांती, अम्बेडकरनगर, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या, उत्तरप्रदेश

मुर्गी आहार बनाने की विधिः

खाद्य अवयव	चूजे बढ़ने के लिये स्टार्टर आहार	चूजों को एक माह बाद ग्रोवर आहार	मा से लिए फिनिसर मुर्गी आहार	मास के लिए मुर्गियों को बेचने के दस दिन पहले देने वाला आहार	अण्डा देने वाली मुर्गियों का लेयर आहार
मक्का, ज्वार	32.00	27.00	44.25	44.10	30.80
चावल की पॉलिस	16.80	40.00	10.00	20.00	35.00
मूंगफली की खली	11.00	15.00	15.00	11.00	—
सूरजमुखी की खली	15.00	5.00	15.00	11.00	11.50
सरसों की खली	11.00	5.00	—	—	11.50
मछली का चूर्ण	12.00	6.00	6.00	5.50	04.00
मांस का चूर्ण	—	—	6.00	5.50	—
एल लॉइसीन	—	—	0.15	—	—
वसा	—	—	2.00	1.25	—
हड्डी का चूरा	0.70	0.60	0.75	0.60	1.00
चूना (खड़िया)	—	0.80	0.50	0.70	5.60
नमक	0.40	0.40	0.25	0.25	0.50
खनिज	0.10	0.10	0.10	0.10	0.10

व्यवस्थाः प्रायःऐसा देखा जाता है, कि एक बार मुर्गी खरीदने के बाद एक झुंड में उन्हीं से बार—बार प्रजनन करवाया जाता है, जिससे इन ब्रीडिंग (अन्तः प्रजनन) के दुष्प्रभाव सामने आते है। इससे अण्डों की संख्या निषेचन एवं प्रस्फुटन में कमी आती है तथा बच्चों की मृत्यु दर बढ़ती है। अतः इन्हें प्रतिवर्ष बदल देना चाहिए। इससे अण्डा उत्पादन व प्रजनन क्षमता में वृद्धि के साथ—साथ चूजों की मृत्यु दर में कमी आती है।

छोटे मुर्गी चूज़ों के पालन हेंतु चूजा ब्रूडर घर का प्रबन्धन :—

मुर्गी घर के एक तरफ 1/3 भाग में बोरे, प्लास्टिक पन्नी एवं गत्ते का प्रयोग कर चिक गार्ड लगाकर चूजा ब्रूडर घर के रूप में बाट लें। अच्छी तरह फर्श साफ करने के बाद इस पर 2 इंच मोटी बिछाली बिछा दें तथा इसके ऊपर दो तह पुराना अखबार बिछा दें। तापमान बनानें के लिए बिछाली से एक फुट की ऊँचाई पर ठीक बीच में आवश्यकतानुसार बुखारी, ब्रूडर लैम्प या बिजली का बल्ब ब्रूडर में लटका दें, इसके बाद चिक फीडर एवं वाटरर चिक गार्ड के ब्रूडर घर में अन्दर रख दें। इसके बाद ब्रूडर घर को फॉर्मल्डिहाइड गैस से शोधित कर लें। शोधित करनें के लियें आधा किलो पाटैशियम परमैग्नेट लेकर पांच बर्तन मे बराबर डाल दें, इसके बाद एक लीटर फॉर्मेलीन को पांच बराबर भाग में बाट कर पाँचो बर्तन में डाल दें। डालनें के तुरंन्त बाद फँर्मल्डिहाइड गैस बनना सुरू हो जायेगी अतः पर्दे गिरा कर जल्दी से बाहर निकल आयें। इस गैस से बिछाली, ब्रूडर चिक फीडर एवं वाटरर आदि में लगे जीवाणु कीटाणु मर जायेंगें। तीन घंटे बाद पर्दे उठा दें, जिससे गैस बाहर निकल जायें। चूजे आनें के एक दिन पूर्व ब्रूडर लैम्प या बिजली का बल्ब जलाकर 24 घण्टे के लिये छोड़ दें, जिससे चूजा ब्रूडर घर परी तरह गर्म हो जायेगा। चूजे आनें के चार घंटे पहले चिक गार्ड के अन्दर ब्रूडर घर में पानी भरे वाटरर रख दें जिससे पानी भी हल्का गर्म हो जायेगा।

मुर्गी चूजों का ब्रूडर घर मे पालन :—

मुर्गी चूजों को बक्से समेत मुर्गी के घर में ले आयें।

बक्से का ढक्कन खोलकर एक–एक कर सारे चूजों को इलेक्ट्राल पाउडर मिला पानी पिलाकर ब्रूडर घर में छाड़तें हैं। चूजे लानें पर ब्रूडर घर में 80 डिग्री फारेनहाइट तापमान होना चाहिये। इलेक्ट्राल पाउडर 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से पीने के पानी में मिलाकर दैं। 4–5 मिलीलीटर प्रति 400 चूजों की कौन्सीटोन तथा वेनेडोक्स या कोनफलैक्स एन्टीबाइटिक्स भी –2 ग्राम पानी में मिला दें। जब चूजे पानी पी लें तो 3 घंटे बाद अखबार पर मक्के का दरा दाना छीट दें। 2 घटें बाद दूसरे दिन से प्रीस्टार्टर दाना फीडर में दें तथा अखबार पर भी डालें। 8वें से 24वें दिन तक स्टार्टर दाना दें।

मुर्गी का एक माह पश्चात पालनः–

एक माह बाद मुर्गी घर में 70 डिग्री फारेनहाइट तापमान रखें तथा मुर्गियों का ग्रोवर दाना दें, इसके साथ ही मुर्गियो के दाना एवं पानीं के वर्तन वाटरर एवं फीडर आवश्यकतानुसार बढ़ा दें। दो माह पश्चात अवश्यकतानुसार मॉस के लिए फिनिसर मुर्गी आहार तथा अण्डा देनें वाली मुर्गियों का लेयर आहार देना चाहियें।

मुर्गियों को संक्रामक रोगों बचावः–

संक्रामक रोगों की रोकथाम के लिए टीकाकरण करना अत्यन्त आवश्यक है। सामान्यतः प्रथम सप्ताह में रानीखेत रोग का. एक स्ट्रेन टीका, ।2–74 दिन की आयु पर गुम्बोरों रोग का टीका, 2। दिन की आयु पर रानीखेत रोग का लसोटा टीका दिया जाता है। गुब्बोरों रोग की अधिक तीव्रता होने पर 22–24 दिन बाद पुनः इस रोग का टीका देना चाहिए। यदि क्षेत्र में लीची सोग का प्रकोप ज्यादा है तो इसे 7–8 दिन की आयु पर टीका लगायें। टीकाकरण कार्यक्रम में कुक्कूट रोग विशेषज्ञ की सलाह से परिवर्तन किया जा सकता है।

मुर्गियों का अन्य रोगों बचावः–

फूँद रोगः

मुर्गियों में अधिकतर यह समस्या बुरादे से आती है और इसमें फेफड़ों पर सफेद, पीले या गुलाबी रंग के गोल दाने से दिखते हैं। चूजे मुँह खोल कर लम्बी साँस लेते हैं। सीटी सी आवाज भी हो सकती है। उपचार के लिए दाने में बारीक पिसा कापर सल्फेट (नीला थोथा) 500 ग्राम/टन 5–7 दिन दें, पानी में न्यूमाईसीन+ डाक्सीसाईक्लीन दें तथा बुरादे में तुरन्त बारीक चूना 5 ग्राम प्रति वर्ग फुट 2 ग्राम ब्लीचिंग पाउडर या केयर टी के साथ अच्छी तरह मिला दें।

फाऊल टायफाईडः

इसमें लीवर, स्पिलीन बढ़ जाता है। उस पर छोट–छोटे सफेद पीले दाग मिल सकते हैं। जर्दी का रंग हरा–लाल एवं आकार बढ़ जाता है, इसके उपचार हेतु इनरोफलाक्स, पीफलाक्स, न्यूमाईसनि+ डाक्सीसाईकलीन या किसी सल्फा मिश्रण का प्रयोग कर सकते है।

पेट में पानी बननाः

यह फीड, पानी और प्रबंधन की समस्या है। यह आमतौर से 2 सप्ताह के बाद शुरू होती है। मुर्गी चूजे के पेट में पानी भर जाता है। फीड में नमक या टाक्सिन अधिक हो तो भी यह समस्या खड़ी हो सकती है। मुर्गी घर में आक्सीजन (स्वच्छ हवा) की कमी के कारण भी यह समस्या आ सकती है। उपचार हेतु दाने में मीठा सोडा 2 किग्रा प्रतिटन 7 दिन के लिये दें। डेढ़ किग्रा गुड़ प्रति 1000 चूजे के हिसाब से दिन में 3–4 घंटे पानी में दें। दूसरे पानी में तीन चार घंटे के लिए सोडियम सिट्रेट 250 ग्राम प्रति 4000 चूजा दें।

काक्सीडियोसिसः

मुर्गियों में आमतौर से अच्छे प्रबंधन वाले पर इस बीमारी के लक्षण नहीं मिल रहे हैं परन्तु बहुत मुर्गियों में सीकल काक्सी के लक्षण प्रमुख रूप से सीका में खून मिली बीट मुर्गियाँ करने लगती हैं, पंख फुलाकर बैठी रहती हैं, वजन बड़ी तेजी से घटता है, मृत्युदर बढ़ जाती है। उपचार हेतु बुरादे में चूना एवं ब्लीचिंग

पाऊडर मिला दें। बुरादे को सदैव सूखा बनाये रखें तथा पानी में एम्प्रोलियम प्रोडक्ट मिलाकर पीने को दें।

सीआर.डी. (माईकोप्लाजमोसिस):

यह साँस की बीमारी है इसमें मुर्गियों को साँस लेने में दिक्कत होती है। मुँह से 'खर–खर' की आवाज भी आती है। पोस्टमार्टम करने पर साँस की नली में बलगम तथा एयर सैक मोटा दिखायी पड़ता है। कलेजी एवं दिल पर सफेद परत सी आ जाती है। शरीर के अन्दर पूरे एयर सैक पर धब्बे मिलते हैं। इस बीमारी में मृत्युदर के साथ–साथ मुर्गियों के वजन में कमी, सूखना जिससे फीड रूपांत्रण बहुत खराब हो जाता है। जब भी यह बीमारी आती है साथ में इकोलाई अवश्य होगी। इसके उपचार हेतु टायेलोसिन या टायमुलिन माईकोप्लाजमा बचाव के लिए उपयुक्त दवा है परन्तु इकोलाई साथ होने पर लिंकोस्पेक्टिन एन्टीबायटिक एक उपयुक्त दवा है।

मुर्गियों के अन्य आवश्यक प्रबन्धः–

मुर्गियों का उचित प्रबन्धन के सम्बन्ध में जानकारी रखना प्रत्येक मुर्गीपलक के लिए आवश्यक हो जाता है।

मुर्गियों को तेज हवा, आँधी, तूफान से बचाना चाहिए।

मुर्गियों के आवास का द्वार पूर्व या दक्षिण पूर्व की ओर होना अधिक ठीक रहता है जिससे तेज चलने वाली पछुवा हवा सीधी आवास में न आ सके।

मुर्गी घर में प्राकृतिक एवं कृत्रिम प्रकाश सहित 44 घंटें का प्रकाश की उपलब्धता होना चाहियें।

आवास के सामने छायादार वृक्ष लगवा देने चाहिए ताकि बाहर निकलने पर मुर्गियों को छाया मिल सके।

मुर्गियों का बचाव हिंसक प्राणी कुत्ते, गीदड़, बिलाव, चील आदि से करना चाहिए।

आवास का आकार बड़ा होना चाहिए ताकि उसमें पर्याप्त शुद्ध हवा पहुँच सके और सीलन न रहे।

कुछ व्याधियाँ मुर्गियों में बड़े वर्ग से फैलकर भंयकर प्रभाव दिखाती है जिसमें वे बहुत बड़ी संख्या में मर जाती है।

अतः बीमार मुर्गियों को अलग कर देना चाहिए। उनमें वैक्सीन का टीका लगवा देना चाहिए।

मुर्गी घर की मिट्टी समय–समय पर बदलते रहना चाहिए और जिस स्थान पर रोगी कीटाणुओं की संभावना हो वहॉ से मुर्गियों को हटा देना चाहिए।

मुर्गियाँ खरीदते समय उनका उचित डॉक्टरी परीक्षण करा लेना चाहिए तथा नई मुर्गियों को कुछ दिनों तक अलग रखकर यह निश्चित कर लेना चाहिए कि वह किसी रोग से ग्रस्त तो नहीं है। पूर्ण सावधानी बरतने पर भी कुछ रोग हो ही जाये तो रोगानुसार चिकित्सा करें।

रोगों से बचाव एवं रोकथाम

मुर्गियों को विभिन्न प्रकार से संक्रामक रोगों से बचाने के लिए कुक्कुट पालकों को मुर्गियों में टीकाकरण अवश्य करा देना चाहिए। जहां तक संभव हो एक गांव या क्षेत्र के सभी कुक्कुट पालकों को एक साथ टीकाकरण करवाने का प्रबन्ध करना चाहिए, इससे टीकाकरण की लागत में कभी आती है। यदि कोई मुर्गी बीमार होकर मर गई हो तो उसे स्वस्थ पक्षियों से तुरन्त अलग कर देना तथा निकटस्थ पशु चिकित्सक से सम्पर्क कर मरी मुर्गी का पोस्टमार्टम करवाकर मृत्यु के सम्भावित कारणों का पता लगाना चाहिए तथा अन्य मुर्गियों को बचाने के लिए उपयुक्त कदम उठाना चाहिए।

इस प्रकार आधुनिक तकनीक अपनाकर पारम्परिक ढंग से मुर्गी पालन कर ग्रामीण परिवारों में खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के साथ–साथ अतिरिक्त आय अर्जित की जा सकती है।

अप्रैल माह में किसान भाई क्या करें

मृदा एवं उर्वरक प्रबंध

डॉ. आर.आर. सिंह
प्राध्यापक (मृदा विज्ञान)

मृदा परीक्षण हेतु मृदा नमूना एक समान खाली खेत से 5–7 जगहों से 15 सेमी गहराई तक अंग्रेजी के वी आकार का गड्ढा खोदकर ऊपर से नीचे तक नमूना लें। सभी नमूनों को मिलायें तथा उसकी ढेरी बनाकर चार भागों में बांटने के बाद आमने सामने के भाग को हटाकर शेष दो भागों की अच्दी तरह मिलाकर पुनः चार भागों में बांटकर दो भागों को पुनः मिलायें। यह क्रिया तब तक करें जब तक नमूना 250 ग्रा न हो जाये। इस नमूने की थैली में भरकर उसके अंदर व बाहर नमूने लिये गये खेत का खसरा सं बोई गयी फसल व बोई जाने वाली फसल आदि का विवरण लिखकर प्रयोगशाला भेजकर परीक्षण कराकर अगली फसल में उर्वरक प्रयोग संस्तुति के अनुसार करें। नमूना लेते वक्त ध्यान दें कि जल जमाव वाली जगह, मेड़ों, पेड़ की छाया तथा खाद की बोरी का प्रयोग न करें, अन्यथा नमूने की शुद्धता प्रभावित होगी।

फसलों में

डॉ. सौरभ वर्मा
विषय वस्तु विशेषज्ञ (सस्य विज्ञान)

(1) गेहूँ के दाने में 10–12 प्रतिशत नमी रहने पर फसल की कटाई दाँतेदार नरेन्द्र हँसिया से करें। नमी की पहचान करने के लिए गेहूँ के दाने को दाँतों से काटें और यदि कट की आवाज आये तो समझें नमी उपयुक्त है।

(2) बीज शोधन करने के बाद मूँग बोने से पहले राइजोबियम कल्चर से उपचारित करना न भूलें।

(3) कल्चर को मिलाने के लिए आधा लीटर पानी में 50 ग्राम गुड़ घोलकर उबालने के बाद ठण्डा कर लें और इस घोल में कल्चर का पैकेट (200 ग्राम) मिलाकर मिश्रण तैयार कर लें, जिसे बोने के 2–3 घण्टे पहले 10 किग्रा बीज में मिला दें। बीज की बुवाई 10 बजे से पहले और सायंकाल 4 बजे के बाद ही करें।

सब्जी एवं उद्यान में

डॉ. शशांक शेखर सिंह
विषय वस्तु विशेषज्ञ (उद्यान विज्ञान)

(1) आलू, चना, सरसों की कटाई के बाद खाली खेतों में लता वाली सब्जियाँ जैसे करेला, टिण्डा, ककड़ी, खीरा, लौकी एवं तोरई आदि की बुवाई 1 मीटर गुणा 50 सेमी दूरी पर करें।

(2) खेत में नत्रजन, फास्फोरस और पोटाश की मात्रा 40:30:30 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से दें।

(3) गर्मी के मौसम को देखते हुए अपने बागों में सिंचाई का उचित प्रबंधन समय पर करें, जिससे बागों में लगे पेड़ों का विकास ठीक प्रकार से हो सके।

(4) अमरूद, नींबू प्रजाति के अंकुरित पौधों को क्यारियों में अथवा पॉलीथीन की थैलियों में स्थानान्तरित करें।

(5) आम के फलों का आकार बढ़ाने के लिये 2 प्रतिशत यूरिया के घोल का छिड़काव करें।

पौध संरक्षण में

डॉ. वी. पी. चौधरी एवं डॉ. पंकज कुमार
विषय वस्तु विशेषज्ञ (फल सुरक्षा)

(1) गन्ना में दीमक के नियंत्रण के लिये गामा बीएचसी 3.75 लीटर सिंचाई के पानी के साथ प्रति हेक्टेयर प्रयोग करें।

(2) अगोला बेधक कीट नियंत्रण के लिए डाइमेथोएट 35 ईसी 1.25 लीटर अथवा डाइमेक्रोन 250 मिली प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।

(3) मूँग में पीला चित्रवर्ण (मोजैक) रोग से बचने के लिए रोग वाहक कीटों का नियंत्रण मिथाइल ओडेमेटान 25 ईसी अथवा डाईमेथोएट 30 ईसी को एक लीटर को 800 से 1000 लीटर पानी में घोलकर 2 सप्ताह के अन्तर पर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

पशुपालन

डॉ. एस.एन. लाल
सह प्राध्यापक (पशु विज्ञान)

(1) गर्भित पशुओं के उत्तम स्वास्थ्य तथा भ्रूण के उचित विकास के लिये अतिरिक्त रातव अवश्य दें।

(2) दुधारू पशुओं को गर्मी तथा लू से बचाने के लिये उन्हें दिन में दो–तीन बार स्वच्छ तथा ताजे पानी से नहलाना चाहिए तथा साथ ही साथ पीने के लिये उन्हें साफ व ताजा पानी दिन में कई बार देना चाहिए।

(3) दुधारू पशुओं में मुख्यतः संकर नस्ल की गायों को गर्मी तथा लू से बचाव हेतु पशुशाला की खिड़कियों पर बोरे के पर्दे लगा दें ताकि समय–समय से उस पर पानी का छिड़काव करते रहें।

(4) पशुओं को गलाघोंटू बीमारी से बचाव हेतु इस माह के अन्त तक टीकाकरण अवश्य करा दें।

(5) मुर्गियों का मांस उत्पादन करने वाले किसान भाई गर्मी से बचाव हेतु सेट उत्तरी एवं दक्षिणी दिशा में खिड़कियों पर टाट के पर्दे लगाकर दोपहर बाद पानी का छिड़काव करते रहें।

संकलनकर्ता : डॉ. आर.आर. सिंह, प्राध्यापक, प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के

प्रश्न :– हैप्पी सीडर से गेहूँ बुवाई कराई थी बहुत लाभ मिला अब मैं धान की सीधी बुवाई ड्रम सीडर से करना चाहता हूं मुझे 135–140 दिन का अगेती प्रजाति जो ज्यादा उत्पादन दे यदि मंसूरी या अच्छी अन्य धान की प्रजाति जिसे हमे अभी ड्रम सीडर से लगा दे।

श्री कुंवर बहादुर सिंह, अमेठी (उ0प्र0)

उत्तर :– सॉभा सब–1 प्रजाति का बीज शोधन के बाद अंकुरित बीज को ड्रमसीडर में तीन चौथाई भाग भरकर लेव किये खेत में लाइन से चलाकर 20 सेमी. लाइन से लाइन की दूरी पर बीज गिराते है। इसमें बीज का अंकुरण दिखने लगे तभी बुआई करनी चाहिए विलम्ब करने पर बीज के ड्रम से गिरने में समस्या हाती है। खेत में ज्यादा पानी नही होना चाहिए। खर–पतवार की खड़ी फसल में समस्या होने पर 500 मिली. नामिनी गोल्ड सोडियम/हे. की दर से 15–20 दिन पर छिडकाव करना चाहिए।

प्रश्न–इस माह बेमौसम बरसात से क्या लाभ व हानि है ?

श्री हेमन्त कुमार, अमानीगंज, अयोध्या

उत्तर–पूर्वांचल में बार–बार वर्षा होने से खेत में खडी फसल गेहूं को नुकसान होगा। कद्दूवर्गीय सब्जियों को नुकसान होगा। खाली खेत की जुताई करने से लाभ होगा।

प्रश्न–कद्दूवर्गीय सब्जियों में फलमक्खी का प्रकोप हो रहा है, रोकथाम बतायें।

श्री राम विशाल पाण्डेय, सेमरी बाजार, सुल्तानपुर

उत्तर–फलमक्खी के प्रबंधन हेतु खेत में प्रति एकड़ की दर से 10 फेरोमोनट्रेप लगायें। गन्ध पास की सहायता से नर कीटों को एकत्र कर नष्ट कर देना चाहिए। नर कीटों को आकर्षित करने हेतु मिथाइल यूजीनॉल 0.1 प्रतिशत् एसीटामीप्रिड 0.1 प्रतिशत को 1.0 ली. शीरे के घोल को चौड़े मुंह वाली बोतल में डालकर 10 शीशी प्रति हे. की दर से प्रयोग करना चाहिए। मिथाइल यूजीनॉल 4 भाग, एल्कोहल 6 भाग तथा थायामोथोजाम 1 भाग, 5 से.मी. लम्बे एवं 1 से.मी. मोटे वर्गाकार प्लाईवुड के टुकड़े को 24 घण्टे घोल में डुबोकर प्लास्टिक की बोतल लटकाकर प्रयोग करना चाहिए। यदि कीट का प्रकोप अधिक हो तो थायामोथोजाम दवा का 200 ग्राम मात्रा को 8–10 ली. पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें।

प्रश्न :– वेस्ट डिकम्पोजर द्वारा अवशेष/कचरा प्रबन्धन कैसे करते हैं ?

श्री मो. आमिर, उदाह पाली, अयोध्या

उत्तर :– वेस्ट डिकम्पोजर लाभकारी सूक्ष्म जीवों का एक समूह है, जो कृषि, पशु और रसोई आदि से उत्पन्न सभी प्रकार के कचरे को 40 दिनों के भीतर उपयोग करने योग्य खाद के रूप में परिवर्तित करने में सक्षम है। वेस्ट डीकम्पोजर के घोल के साथ कचरे को गीला कर दें। जैव कचरे की एक 18–20 सेमी मोटी परत बनाई जाती है और वेस्ट डीकम्पोजर के घोल से दोबारा गीला कर देते है। जब तक कि 30–45 सेमी की मोटी परत न बन जाये, ऊपर की प्रक्रिया दोहराते रहे। समान कम्पोस्टिंग के लिये हर सात दिनों के अंतराल पर ढ़ेर के उलट–पलट करते रहें और इस ढ़ेर पर हर बार वेस्ट डीकम्पोजर का घोल डालते रहें। कम्पोस्टिंग की पूरी अवधि के दौरान 60 प्रतिशत नमी बनाये रखें। यदि आवश्यक हो तो और घोल मिला दें। कम्पोस्ट खाद 40 दिनों उपरान्त उपयोग करने के लिये तैयार होती है।

पंजीयन संख्या - 54461/91 डाक पंजीयन संख्या एल. डब्लू./एन.पी. 34

प्रति रूपये 25/—मात्र

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या — 224 229

द्वारा

कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र

के अन्तर्गत प्रकाशित ग्रामोपयोगी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य रु.
आधुनिक मधुमक्खी पालन एवं प्रबन्ध	20.00
जिमीकन्द की खेती	15.00
मशरूम उत्पादन एवं उपयोगिता	12.00
किसानोपयोगी फसल सुरक्षा तकनीक	50.00
फसल उत्पादन तकनीक	35.00
जीरो टिल सीड कम फर्टी ड्रिल	10.00
फल—सब्जी परीरक्षण एवं मानव आहार	50.00
गन्ने की आधुनिक खेती	15.00
जीरो टिलेज गेहूँ बुवाई की एक विश्वसनीय तकनीक	20.00
केचुआ पालन (वर्मीकल्चर) एवं वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन	10.00
व्यावसायिक कुक्कुट (ब्रायलर) उत्पादन	20.00
फसलों के सूत्रकृमि रोग एवं उनका वैज्ञानिक प्रबन्धन	25.00
आय संवर्धन हेतु प्रमुख सब्ज़ियों की उत्पादन तकनीक	25.00
गृहणियों के लिए बेकिंग कला	25.00
स्वच्छ दूध उत्पादन तकनीक एवं उसका महत्व	20.00
गायों एवं भैसों के मुख्य रोग, टीकाकरण एवं संतुलित पशु आहार	20.00
मछली पालन	40.00
फसल अवशेष प्रबंधन	30.00

मुद्रित

सेवा में,
श्री/श्रीमती

प्रेषक:
प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या — 224 229

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या की ओर से प्रो. ए.पी. राव निदेशक प्रसार द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित